आज़ादी का अमृत महोत्सव

उन्नत कृषि

अक्टूबर - दिसंबर, 2021

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
कृषि एवं किसान कल्याण विभाग
विस्तार निदेशालय

उन्नत कृषि

वर्ष 54, अंक 1 अक्टूबर–दिसंबर, 2021

1. फसल विविधीकरण से किसान की बढ़ी आमदनी 5
डा0 सुरेन्द्र कुमार सिंह
2. घटते जल संसाधनों में फसलोत्पादन में वृद्धि के लिए वाषोत्सर्जन आधारित जल प्रबंधन एक उचित प्रौद्योगिकी 7
भीम पारीक, रणवीर सिंह राणा, तनूजा राणा संजीव कुमार संदल
3. कद्दू की उन्नत खेती 11
डा0 आर.सी.आसवानी, एस0के0 दनेलिया, वरूण जादौन, अनिल शर्मा
4. शून्य लागत प्राकृतिक खेती : किसानों की दोगुना आय में लाभकारी 16
मोती लाल मीणा, ऐश्वर्य डूडी और धीरज सिंह
5. छोटानागपुर पठारी क्षेत्र में आधुनिक कृषि उपकरणों को अपनाने में अड़चन 21
अनुकूल प्र0 अनुराग, पी.के. सुंदरम, डी0 के0 राघव, उज्जवल कुमार और बिकाश सरकार
6. फल व फूलों से निर्मित शर्बत एवं उनके औषधीय गुण 24
डा0 शुभम मिश्रा एवं डा0 लतिका व्यास
7. दुधारू पशुओं में गर्मी के लक्षण की पहचान एवं कृत्रिम गर्भाधान 27
डा0 सुधीर कुमार, डा0 उत्सव शर्मा एवं डा0 अनिल कुमार पाण्डेय

संपादकीय मंडल

डा. वाई. आर. मीणा
अपर आयुक्त (विस्तार)

सुधीर कुमार
संयुक्त निदेशक (कृषि सूचना)

डा0 संजय कुमार जोशी
सहायक संपादक

कला पक्ष

एस0एस0 नेगी
मुख्य कलाकार

सुचित्रा राय
वरिष्ठ कलाकार

पत्र व्यवहार का पता
संयुक्त निदेशक (कृषि सूचना)
उन्नत कृषि
विस्तार निदेशालय
कृषि, एवं किसान कल्याण विभाग
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार
कृषि विस्तार सदन, पूसा, नई दिल्ली–110012
ईमेल: editor.intensive@gmail.com

पत्रिका में दिये गए विचार विस्तार निदेशालय, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के नहीं अपितु लेखकों के हैं।

संपादकीय

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, किसानों की प्रगति के लिए समर्पित एवं प्रतिबद्ध है। मंत्रालय सदैव योजनाओं, कार्यक्रमों, गतिविधियों द्वारा किसानों से जुड़ा रहता है। किसानों की समस्याओं के निस्तारण को मंत्रालय प्राथमिकता देता रहा है। गत वर्षों में कोरोना काल के संक्रमण से गुजरते हुए मंत्रालय ने रबी एवं खरीफ फसलों की खरीद का कार्यक्रम बृहद स्तर पर सुचारू रूप से चलाया। इसके अतिरिक्त अन्न वितरण योजना, एग्रीकल्चर इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड़ जैसे महत्वपूर्ण और व्यापक कार्यक्रमों को प्रभावी एवं बेहतर ढंग से लागू किया है।

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के बजटीय आवंटन का लगातार बढ़ना और योजनाओं, कार्यक्रमों, गतिविधियों एवं पहलों का बेहतर क्रियान्वयन यह बताता है कि मंत्रालय के प्रयास किसानों के साथ योजनाओं के माध्यम से संवाद स्थापित करना है। यही कृषि विकास यात्रा को सतत एवं प्रवाहमय बनाये हुये है।

देश के खाद्यान्न उत्पादन में लगातार वृद्धि नये कीर्तिमान के साथ राष्ट्र को खाद्य सुरक्षा के नये आयाम दे रही है। देश में अन्न वितरण योजना की सफलता इसका सुखद उदाहरण है। खाद्यान्न उत्पादन में आशातीत वृद्धि के साथ तिलहनी एवं दलहनी फसलों के उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि से राष्ट्र सशक्त एवं सामर्थ्यवान बना है।

मंत्रालय द्वारा अभिनव प्रयास के दौरान "प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना", "प्रधानमंत्री मान धन योजना", "मृदा स्वास्थ्य कार्ड," "जैविक खेती", "ई–नाम", "किसान उत्पादक संगठन", "उद्यम पूंजी सहायता" एवं राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन आदि व्यापक योजनाओं ने किसानों को बेहतर जीवन देने के लिए उनकी आमदनी में वृद्धि की है। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, कृषि यंत्रीकरण आदि ऐसे क्षेत्र हैं जहां पर मंत्रालय ने बेहतर समन्वयन के द्वारा योजनाओं को क्रियान्वयन कर बेहतर कार्य किये हैं।

कृषि व्यापार में भी अभूतपूर्व वृद्धि को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि गैर बासमती चावल, गेहूं, मसाला, कच्चा कपास आदि के निर्यात में वृद्धि दर्ज की गई है।

फसल आपदा राहत मानकों में सुधार द्वारा अब फसल के मात्र 33 प्रतिशत के नुकसान पर मुआवजा देय हो गया है। साथ ही प्राकृतिक आपदाओं में मृतकों के परिजनों को मिलने वाली राशि को रूपये 1.50 लाख से बढ़ा कर 4.00 लाख किया गया है और इस सहायता के लिए ग्राह्यता एक हेक्टेयर से बढ़ाकर दो हेक्टेयर की गई है।

भारत सरकार देश के किसानों को फसल ऋण पर 5 प्रतिशत ऋण सहायता देती है। इस प्रकार किसानों को फसल ऋण पर मात्र 4 प्रतिशत ब्याज देय होता है। लेकिन देश के कई ऐसे राज्य हैं जो किसानों को ब्याज रहित ऋण उपलब्ध कराते हैं। यह किसानों के प्रति संवेदनशीलता, सजगता और दायित्वबोध की पराकाष्ठा है। मंत्रालय के सभी प्रयास किसानों को बेहतर जीवन देने के प्रति संकल्पित दिखाई देते हैं। आओ मिलकर राष्ट्र निर्माण के लिए कृषि विकास रथ को आगे बढ़ाते रहने का संकल्प लें।

सुधीर कुमार

फसल विविधीकरण से किसान की बढ़ी आमदनी

डा. सुरेन्द्र कुमार सिंह
(विषय वस्तु विशेषज्ञ)
कृषि अर्थशास्त्र एवं प्रक्षेत्र प्रबंध
कृषि विज्ञान केन्द्र, कैमूर (बिहार)

श्री रामचेला सिंह, पिता – स्व0 बालरूप सिंह, ग्राम– चैनपुरा, पोस्ट – अधौरा, जिला– कैमूर (बिहार) के जागरूक एवं नवाचारी आदिवासी किसान हैं। उनके पास खेती योग्य 2.4 हेक्टेयर पठारी जमीन कर्मनाशा नदी के तट पर है। नवाचारी किसान के पास सीमित साधन के होते हुए भी सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है। पहले वे परंपरागत ढंग से धान, मक्का, तिल, गेहूँ, चना, मटर, सरसों एवं आलू की खेती करते थे परंतु कृषि विज्ञान केन्द्र, कैमूर द्वारा प्रशिक्षण, भ्रमण और प्रदर्शन के बाद अब वैज्ञानिक तरीके से खेती कर अपनी आमदनी को ढाई गुना से भी ज्यादा कर चुके हैं। फसल सघनता वर्ष 2017–18 में 140 प्रतिशत थी जो वर्ष 2018–19 में बढ़कर 217 प्रतिशत हो गयी। आमदनी 1,34,180 रू0 से बढ़कर 3,68,900 रूपये हो गयी। ऐसा होने के प्रमुख कारणों में पूर्व खेती के साथ–साथ बाजार में मांग आधारित संकर सब्जी मटर की खेती को अपनाना, अगेती चना के साथ मूली एवं गाजर की मिश्रित खेती जैसे नवाचार को अपनाने एवं उन्नत बीज, संतुलित उर्वरक का प्रयोग, समय पर

सिंचाई तथा कीट–रोग प्रबंधन है। पहले आय–व्यय अनुपात 1.73 थी जो अब 2.18 हो गयी। 0.40 हेक्टेयर (एक एकड़) में अगेती सब्जी वाली मटर के संकर किस्म जी0एस0–10 की बुआई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में किया और दिसम्बर–जनवरी तक बाजार में 25 से 30 रूपये प्रति किलोग्राम की दर से 30 क्विंटल हरी मटर बिक्री कर 61,250 रूपये शुद्ध मुनाफा लिया। इसी प्रकार से अगेती चना के साथ मूली और गाजर की 0.20 हेक्टेयर में खेती करने में रू0 7080 का खर्च आया और रू0 18.200 की आमदनी हुई। चना के साथ मिश्रित खेती के रूप में मूली और गाजर की खेती उनके द्वारा किया गया एक नवाचार विधि है। उनके इस कार्य को देखकर गाँव के अन्य कृषक उनके प्रक्षेत्र का भ्रमण कर उनसे प्रेरित होकर वर्ष 2020–21 से सब्जी वाले मटर की खेती प्रारंभ कर अच्छी आमदनी प्राप्त कर रहे हैं। अधौरा प्रखण्ड के बभनी, लेवा, हरभोग, चाया, चफना, आथन और लोहरा गाँव के 25–30 कृषक इस खेती को अपना चुके हैं और आमदनी दुगुनी तक कर रहे हैं। श्री रामचेला सिंह

को कृषि में किये गये इस उत्कृष्ट कार्य के लिये वर्ष 2021 में बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर (भागलपुर), बिहार द्वारा ''उत्कृष्ट किसान पुरस्कार'' से सम्मानित किया गया है। यदि किसान वैज्ञानिक ढंग से खेती करे तो भारत सरकार द्वारा 2022 तक किसानों की आमदनी दुगुना करने का सपना साकार हो सकता है। श्री रामचेला सिंह को कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा समय–समय पर राज्य के अंदर कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदर्शित तकनीकियों को दिखाने के लिये भ्रमण कराया गया और साथ ही साथ आधुनिक कृषि यंत्रों के माध्यम से कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा उनके प्रक्षेत्र पर प्रदर्शन भी कराये गये हैं जैसे– पोटैटो ट्रांसप्लान्टर द्वारा आलू की बुआई, जीरो टिलेज से धान, गेहूँ, चना, मसूर की बुआई, रेजबेड विधि से मक्का, सरसों की बुआई इत्यादि। संक्षिप्त रूप से सारणी के माध्यम से उनके द्वारा किये कृषि कार्य को फसल, क्षेत्रफल, उत्पादन, आय–व्यय सहित तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है जो निम्न प्रकार है।

परंपरागत विधि					वैज्ञानिक विधि				
फसल	क्षेत्रफल (हे0 में)	उत्पादन (क्विं0)	आय (रू0)	व्यय (रू0)	फसल	क्षेत्रफल (हे0 में)	उत्पादन (क्विं0)	आय (रू0)	व्यय (रू0)
खरीफ :									
धान	1.00	33.80	54080	32900	धान	1.00	39.50	63,200	35,100
मक्का	0.10	3.00	5100	2475	मक्का	0.40	16.00	27,200	11,850
तिल	1.00	2.50	12,500	5,100	तिल	1.00	3.40	17,000	6,400
योगः	**2.10**	**39.30**	**71,680**	**40,475**	**कुल योग**	**2.40**	**58.90**	**1,07,400**	**53,350**
रबी :									
गेहूँ	0.40	8.50	14,450	7,080	गेहूँ	0.60	18.00	30,600	14,255
चना	0.40	5.00	22,500	9,750	चना	0.40	5.80	26,100	13,300
					चना + मूली + गाजर	0.20	2.50 2.00 1.00	18,200	7,080
मसूर	–	–	–	–	मसूर	0.20	2.00	8,000	3,880
मटर	0.20	2.20	8,800	4,000	हाईब्रिड सब्जी मटर	0.40	30	9,000	28,750
सरसों	0.20	2.00	9,000	3,850	सरसों	0.40	5.80	26,100	9,800
आलू	0.05	7.75	7,750	5,100	आलू	0.20	42.00	42,000	30,500
योगः	**1.25**	**25.45**	**62,500**	**29,780**	**कुल योग**	**2.40**	**109.10**	**2,41,000**	
ग्रीष्मकालीनः									
मूँग	–	–	–	–	मूँग	0.40	4.10	20,500	8,100
योगः	**–**	**–**	**–**	**–**		**0.40**	**4.10**	**20,500**	**8,100**
कुल योगः	**3.55**	**64.75**	**1,34,180**	**77,785**		**5.20**	**168.00**	**3,68,900**	**1,69,015**

घटते जल संसाधनों में फसलोत्पादन में वृद्धि के लिए वाष्पोत्सर्जन आधारित जल प्रबंधन एक उचित प्रौद्योगिकी

भीम पारीक, स्नातकोत्तर छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, **रणवीर सिंह राणा**, भूगोलिक सूचना अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र, **तनूजा राणा**, मृदा विज्ञान विभाग और **संजीव कुमार संदल**, मृदा विज्ञान विभाग, हिमाचल प्रदेश, चौ0 स0 कु0 हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर – हिमाचल प्रदेश

पानी सबसे कीमती प्राकृतिक संसाधन है जो धीरे–धीरे दुनिया भर में सीमित संसाधन बनता जा रहा है। दुनिया की एक तिहाई से अधिक आबादी को वर्ष 2025 तक पूर्ण रूप से पानी की कमी का सामना करना पड़ेगा । दुनिया के वर्षावन क्षेत्र सबसे अधिक प्रभावित होते हैं जो पहले से ही जनसंख्या का भारी संकेद्रण कर रहे हैं। भारत में भी स्थिति गंभीर है, जहां पानी की कमी पहले से ही अधिकांश आबादी को प्रभावित कर रही है। कृषि, भारत में पानी का सबसे बड़ा (81प्रतिशत) उपभोक्ता है। कृषि में पानी के कुशल और विवेकपूर्ण प्रबंधन के लिए सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए। कृषि को 2050 तक विश्व स्तर पर 60 प्रतिशत अधिक खाद्यान्न उत्पादन की आवश्यकता है और समान जल संसाधनों का उपयोग करके विकासशील देशों में 100 प्रतिशत अधिक उत्पादन करना है। एशिया में एक अनुमान के अनुसार औद्योगिक जल उपयोग में 65 प्रतिशत वृद्धि, घरेलू उपयोग में 30 प्रतिशत वृद्धि और 2030 तक कृषि उपयोग में पांच प्रतिशत वृद्धि की संभावना है।

सिंचाई सबसे अधिक पानी की खपत करने वाला क्षेत्र है जो कुल निकासी का 80 प्रतिशत से अधिक है। कृषि और अन्य क्षेत्रों में पानी की बढ़ती मॉग और पिछले कुछ दशकों में इसकी घट्ती मात्रा के कारण इस सीमित संसाधन के उपयोग के प्रबंधन की आवश्यकता है। कुशल कृषि जल प्रबंधन के लिए फसल में पानी की आवश्यकता का विश्वसनीय आंकलन आवश्यक है। फसल प्रबंधन में, वाष्पीकरण–वाष्पोत्सर्जन को महत्वपूर्ण माना जाता है। यह फसल की कुल पानी की आवश्यकता को निर्धारित करता है। इसलिए वास्तविक समय मौसम टिप्पणियों का उपयोग करके वाष्पीकरण

वाष्पोत्सर्जन के आंकलन के लिए कार्यप्रणाली को नियोजित करना, फसल के लिए पानी की आवश्यकता को मॉडलिंग करने की आवश्यकता है। वर्तमान में वास्तविक समय मौसम डेटाबेस की उपलब्धता बढ़ी है और यहां तक कि स्थानिक डेटा भी अंतिम उपयोगकर्ताओं के लिए सुलभ है। इसलिए, अध्ययन, मुख्य रूप से वास्तविक समय मौसम आंकड़ों के आधार पर फसल पानी की आवश्कता और सिंचाई शेड्यूलिंग से अधिक पानी की बचत की जा सकती है और यह आज के समय की मांग भी है।

फसल जल मांग –फसल जल मांग फसल की अवस्था, मौसम और मिट्टी प्रकार पर निर्भर करती है। फसल जल मांग प्रारंभिक फसल अवस्था में कम होती है और वृद्धि के साथ बढ़ती जाती है। वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन के आंकड़ों से और फसल सूचकांक से फसल वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन को आसानी से ज्ञात किया जाता है और फसल वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन फसल की जलमांग का 99 प्रतिशत से ज्यादा होता है। पौधे में लगभग 1 प्रतिशत पानी ही कार्यकीय

प्रक्रियाओं के लिए लगता है। इसलिए एक कि0 गेहूं को पालमपुर क्षेत्र में पैदा करने के लिए वर्षा और सिंचाई को मिलाकर 1200–1500 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। यह मांग तापमान वृद्धि से और बढ़ने की संभावना होती है। अधिकतर फसल जल मांग को पैन इवापोरेशन से तय किया जाता है। परन्तु फसल वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन विधि से तय की गई फसल जल मांग कम होती है और इस विधि द्वारा फसल सिंचाई सारणी से फसल की पैदावार भी ज्यादा होती है और पानी भी कम लगता है।

गर्मियों में लगने वाली फसलों (खरीफ) की पानी की आवश्यकता ज्यादा होती है। यह भूमि से वाष्पन एवं पौधों से वाष्पोत्सर्जन के अधिक होने से होती है। वाष्पन मुख्यतः वायुमंडल के तापमान व हवाओं की स्थिति पर निर्भर करता है। भिन्न फसलों की जल आवश्यकता अलग–अलग होती है। यह जल मांग बीज से बीज तक की अवस्था के समय पर निर्भर करती है। शुरूआत में जल की कम आवश्यकता होती है जबकि फसल वृद्धिकाल में इस की आवश्यकता अधिक हो जाती है। यह आवश्यकता पैन वाष्पन का आंकलन कर किसी भी जगह के लिए और फसल के लिए निकाली जा सकती है।

विभिन्न प्रमुख फसलों की जल मांग –

सिंचाई प्रणाली में बदलाव लाना एक महंगा कदम है क्योंकि इसके लिए अधिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। उपयुक्त सिंचाई विधियों के अलावा हम मौसमीय अवयवों व अंतरिक्षीय उपग्रहों के आधार पर फसल की जल मांग को उस स्तर तक कम कर सकते हैं जहां तक उत्पाद की उत्पादकता में कमी न हो।

वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन विधि – इस विधि से हम फसल की उपयुक्त जल मांग व सिंचाई की समय सारणी का निर्धारण कर सकते हैं। इस विधि में प्रतिदिन फसल क्षेत्र के जल में कमी को पौधों द्वारा तथा भूमि द्वारा अंकित कर लिया जाता है। जिसे मुख्यतः उस फसली क्षेत्र का वाष्पन वाष्पोत्सर्जन कहा जाता है। पालमपुर क्षेत्र में सर्दियों में वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन की दर 1.5 से 3 मिली लीटर तथा गर्मियों में यह 8 से 10 मिलीलीटर के लगभग होती है। वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन की दर हवा की गति, आर्द्रता, तापमान, वर्षा, पत्ती सूचकांक, फसल की अवस्था, मिट्टी के प्रकार व फसल के प्रकार आदि घटकों पर निर्भर करती है। इस विधि के उपयोग से सिंचाई के पानी के अपव्यय से बचा जा सकता है क्योंकि इस विधि में फसल

फसल	जल मांग (मिमी प्रति हेक्टेयर)	जल मांग (लाख लीटर प्रति हेक्टेयर)
गेहूं	450–650	45–65
चावल	900–2500	90–125
मक्का	450–650	45–65
गन्ना	1500–2500	150–250
कपास	700–1300	70–130
आलू	500–700	50–70
ज्वार	450–650	45–65
जौ	450–650	45–65
सोयाबीन	450–700	45–70
मूंगफली	500–700	50–70

की सिंचाई उस फसल क्षेत्र में उपलब्ध नमी के आधार पर दी जाती है। इस विधि से सिंचाई जल की मांग तथा सिंचाई की संख्या में कमी कर सकते हैं। एक शोध के दौरान पाया गया कि गेहूं की फसल से उच्चतम उत्पादन के लिए वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन विधि से 237 मिलीलीटर व 267 मिलीलीटर कुल जल की आवश्यकता हुई जो कि सामान्य दी हुई जल मांग (450–650 मिली लीटर) से बहुत कम है। सामान्य विधि की अपेक्षा इस विधि में 25 लाख लीटर से 65 लाख लीटर पानी की बचत की जा सकती है। इसी विषय के संदर्भ में एक अन्य शोध के दौरान पाया गया कि वाष्पन–वाष्पोसर्जन विधि में ज्वार की जल मांग 187.5 मिलीलीटर ज्ञात हुई जबकि यह ज्वार की घोषित की हुई जल मांग से बहुत कम है। इसमें एक से दो सिंचाई की कमी होती है तथा 25

लाख से 65 लाख लीटर पानी की बचत होती है। आलू की फसल के लिए अनुसंधान में पाया गया है कि फसल वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन अलग अलग विधियों द्वारा ज्ञात कर 60–120 मिलीलीटर पानी बचाया जा सकता है। सामान्य मौसम में और फसल की उत्पादकता पर भी कोई फर्क नहीं पड़ता। आजकल मौसम विज्ञान विभाग वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन आंकड़ों को प्रतिदिन दिखाता है। उसको आधार मान कर फसलों में पानी की सलाह दी जा सकती है साथ में भारतीय मौसम विभाग का पूर्वानुमान जो पांच दिन पहले आता है उसका भी आंकलन कर और वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन के आंकड़ों के संग्रहण से सही समय पर फसल सिंचाई से फसल सिंचाई उपयोगिता को बढ़ा सकते हैं। आजकल के बदलते मौसम के संदर्भ में जहॉ तापमान की वृद्धि दर्ज की जा रही है वहीं पानी का सही और कम प्रयोग करना एक उचित फसल प्रबंधन का मुख्य हिस्सा है।

सुदूर संवेदन विधि से प्राप्त आंकड़ों द्वारा सिंचाई प्रबंधन–जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में और वर्तमान परिस्थितियों में हिमाचल प्रदेश में पिछले दस सालों के मौसम आंकड़ों से रबी फसलों में अक्टूबर से जनवरी तक सूखे का सामना होता है। सिंचाई प्रबंधन के लिए व्यवस्थित आधार पर फसल जल आवश्यकता का अनुमान लगाने के लिए सूदूर संवेदन तकनीक के उपयोग से काफी सटीक परिणाम मिले हैं। सुदूर संवेदन तथा भौगौलिक सूचना तंत्र प्रणाली का उपयोग पिछले कुछ वर्षों में एक आधुनिक पद्धति के रूप में किया जा रहा है। सुदूर संवेदन प्रणाली द्वारा एक बड़े क्षेत्र के जलवायु संबंधी तथा भौगौलिक संबंधित आंकड़े बहुत कम समय में प्राप्त किये जाते हैं। इन जलवायुवीय व भौगौलिकीय आंकड़ों का सोंफ्टवेयर द्वारा विश्लेषण करके भूमि से संबंधित तथा जलवायु और मौसम से संबंधित अनेक मानचित्र बनाए जा सकते हैं। इस विधि में अंतरिक्ष में सैटेलाइट उपकरणों का उपयोग फसल क्षेत्र के मौसम संबंधी आंकड़ों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इन आंकड़ों के विश्लेषण के आधार पर हम फसलों की सिंचाई की संख्या व फसल जल मांग का निर्धारण कर सकते हैं। कुछ वैज्ञानिकों ने शोध के दौरान पाया कि फसल जल मांग को हम अंतरिक्षीय उपकरणों द्वारा भी ज्ञात कर सकते हैं।

सस्यन क्रियाओं व तकनीकों द्वारा मृदा नमी का संरक्षण :

1.खरपतवार नियंत्रण

2. गहरी जुताई
3. वाष्पीकरण को कम करने हेतु पलवार का प्रयोग
4. संरक्षण जुताई
5. फसल चक्र
6. हरी खाद डालना
7. मिश्रित फसल और अंतरसस्यन
8. वाष्पोत्सर्जनरोधी रसायनों जैसे की ओलिन 16 प्रतिशत व साइकोसेल (0.03 प्रतिशत)फसल की उचित अवस्था में छिड़काव।
9. धान में श्री विधि – यह धान को उगाने की विधि है। इसमें हम धान की पौध का निश्चित दूरी पर तथा केवल एक ही पौधा लगाते हैं। एक साथ कई पौधे नहीं लगाए जाते हैं। यद्यपि धान अधिक जल मांग वाली फसल है। लेकिन श्री विधि के द्वारा 15 से 20 प्रतिशत जल को बचा सकते हैं।
10. सूक्ष्म सिंचाई विधियॉ :

i) फव्वारा सिंचाई प्रणाली –

फव्वारा सिंचाई विधि एक सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली है जिसमें पानी की बचत की जा सकती है। यह विधि विभिन्न फसलों में अपनाई जा सकती है। इस विधि से गेहूं की फसल में सिंचाई करने पर 40 से 50 प्रतिशत पानी की बचत की जा सकती है। इस विधि से गेहूं में सिंचाई करने पर 25 से 30 लाख लीटर पानी कम लगता है। इसी

तरह जौ की फसल में इस विधि के उपयोग से 50 से 60 प्रतिशत तथा 35 से 40 लाख लीटर पानी की बचत की जा सकती है। कपास की फसल में इस विधि के उपयोग से 35 से 40 प्रतिशत पानी तथा 40 से 45 लाख लीटर पानी की बचत की जा सकती है। मुख्यतः इस सिंचाई प्रणाली को अपनाने से फसलों में 55 से 65 प्रतिशत जल की मात्रा को बचाया जा सकता है।

ii) टपक सिंचाई प्रणाली – यह सिंचाई प्रणाली इजराइल द्वारा विकसित की गई है। इस सिंचाई प्रणाली में हम 70 से 85 प्रतिशत पानी की बचत कर सकते हैं। यह सिंचाई प्रणाली मुख्यतः सब्जी वर्गीय फसलों तथा फल वाली फसलों के लिए उपयुक्त है। इस विधि द्वारा गन्ना में सिंचाई करने पर 55 से 65 प्रतिशत तथा 75 लाख से 1 करोड़ पचास लाख लीटर पानी की बचत की जा सकती है। इसी प्रकार कपास में इस सिंचाई प्रणाली का उपयोग करने पर 55 प्रतिशत से 65 प्रतिशत तथा 65 लाख लीटर पानी की बचत की जा सकती है। इस विधि में हम सिंचाई जल के साथ उर्वरकों को भी दे सकते हैं। यह सिंचाई प्रणाली बागवानी क्षेत्र तथा सब्जी उत्पादन वाले क्षेत्रों में अधिक कारगर साबित हुई है।

1. पाइप सिस्टम –विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा पाइप सिस्टम पर किसानों को अनुदान स्वरूप सुविधाएं प्रदान कराई जाती हैं जिससे उंची नीची भूमि पर भी आसानी से सिंचाई की जा सकती है। इस विधि से सिंचाई करने पर 10 से 15 प्रतिशत जल की बचत होती है।

2. गेहूं में फर्ब विधि से सिंचाई – इस विधि से गेहूं में सिंचाई करने पर कम मात्रा में सिंचाई जल का नुकसान होता है। अर्थात् लगभग 30 से 40 प्रतिशत सिंचाई जल को इस विधि से बचा सकते हैं। इस विधि द्वारा कूडों में गेहूं की बुवाई करते हैं तथा उसी में ही सिंचाई जल का प्रवाह करते हैं जिससे अतिरिक्त जल बर्बाद होने से बच जाता है।

लंबे समय तक सूखा, बढ़ती आबादी, शहरी मांग में वृद्धि और जलवायु प्रवृतियों में बदलाव के कारण दुनिया भर में पानी की कमी हो रही है। 2050 तक दुनिया की आबादी 10 बिलियन तक पहुंचने का अनुमान है और खाद्य, ईंधन और फाइबर की मांग के साथ–साथ पहले से ही दुर्लभ ताजे पानी की मांग बढ़ जाएगी। इस समस्या से उबरने के लिए कम पानी के संसाधनों का उपयोग करते हुए कृषि उत्पादन को बढ़ाने की आवश्यकता है। अतः उल्लेख की हुई विधियां जैसे वाष्पन–वाष्पोत्सर्जन विधि, सूदूर संवेदन विधि द्वारा प्राप्त उस क्षेत्र के प्रतिदिन मौसमीय आंकड़ों द्वारा विभिन्न फसलों में पानी की बचत की जा सकती है। विभिन्न प्रयोगों द्वारा ज्ञात हुआ है कि गेहूं में इन विधियों के प्रयोग से 25 से 30 प्रतिशत पानी की बचत की जा सकती है। इस प्रकार यह तकनीक वर्तमान स्थिति के लिए कारगर साबित हो सकती है। इसके अलावा विभिन्न प्रकार की सस्य तकनीकों को अपनाकर जैसे पलवार, गहरी जुताई, खरपतवार नियंत्रण, हरी खाद, संरक्षण जुताई, फसल चक्र, धान में श्री विधि का प्रयोग तथा सूक्ष्म सिंचाई की तकनीकों जैसे टपक विधि, फव्वारा विधि को अपनाकर भविष्य में बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य मांग को पूरा किया जा सकता है तथा ताजे पानी की उपलब्धता को संरक्षित किया जा सकता है।

कद्दू की उन्नत खेती

डा. आर.सी.आसवानी, एस.के.दनेलिया, वरूण जादौन एवं अनिल शर्मा
कृषि विज्ञान केन्द्र, आरोन, गुना (म.प्र.)

भारत में कद्दू या काशीफल की खेती पुरातन काल से होती आ रही है। कददूवर्गीय सब्जियों में कददू एवं कुम्हड़ा का विशेष स्थान है। इसके कच्चे व पके हुए फलों से कई प्रकार की सब्जियां बनाई जाती हैं। उत्तर भारत में तो विवाह व त्यौहार आदि अवसरों पर इसकी सब्जी बनाने की प्रथा है। कद्दू कच्चा और पका फल सब्जी के लिए तथा पके फलों का मिठाई (पेठा) बनाने में प्रयोग होता है। कुम्हड़ा या कददू की एक किस्म मिष्ठान पेठा बनाने में प्रयुक्त होता है। इसके पके हुए फलों को साधारण ताप पर भी लम्बे समय तक रखा जा सकता है। यही कारण है कि जिस समय बाजार में सब्जियों का अभाव रहता है उस समय भी यह उचित मूल्य पर उपलब्ध रहता है। इसकी कोमल पत्तियों तथा फूलों की भी पहाड़ी लोग स्वादिष्ट सब्जी बनाकर उपयोग में लाते हैं। इसके बीज चीनी/शक्कर के साथ मिलाकर फीताकृमि (टेपवर्म) से पीड़ित व्यक्तियों को खिलाते हैं। इसके फलों का गूदा फुलटिस के रूप में फोड़ों और घाव पर बॉधा जाता है। इसकी सब्जी में सभी आवश्यक पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। कम लागत केराटीन की अधिक मात्रा तथा अच्छी भंडारण क्षमता के कारण ग्रीष्म कालीन सब्जियों में कद्दू की सब्जी अधिक पसंद की जाती है।

काशीफल के 100 ग्राम खाने योग्य भाग में 92.5 ग्राम जल, 1.4 ग्राम प्रोटीन, 46 ग्राम कार्बोहाइड्रेटस, 0.1 ग्राम वसा तथा 0.6 ग्राम खनिज लवण पाये जाते हैं। कददू के अन्तर्गत तीन प्रजातियॉ काशीफल या समर स्क्वेश (कुकुरबिटा पीपो), विन्टर स्क्वेश छप्पन कददू (कुकरविटा मोस्चेटा) तथा कुकरबीटा मैक्सीमा आती है।

काशीफल या समर स्क्वेश (कुकुरबिटा पीपो) में फलवृन्त

गहराई तक उभार लिये होता है एवं फल में 5–8 धारियॉ होती हैं जबकि विन्टर स्क्वेश/शीतकालीन (कुकरविटा मोस्चेटा)में फलवृन्त से फल मजबूती से जुड़ा होता है तथा आमतौर पर फल पर 5 धारियॉ होती हैं तथा कुकरविटा मैक्सिमा में फलवृन्त बेलनाकार होता है तथा उसमें धारियॉ नहीं पायी जाती हैं।

1. **समर स्क्वेश/ग्रीष्मकालीन (कुकरबिटा पीपो) किस्में–**

i) काशीफल/ कददू किस्में – पूसा अलंकार, पंजाब छप्पन कद्दू, पूसा हाइब्रिड–1, काशी शुभांगी या वाराणसी छप्पन कद्दू नरेन्द्र उपहार, काशीहरित, नरेन्द्र अग्रिम, नरेन्द्र उपकार, नरेन्द्र आभूषण, नरेन्द्र अमृत, सरस, सुवर्णा, सूरज (के.ए.यू.), पी.ए.यू. मगज कददू–1 पंजाब सम्राट, पी.पी.एच–1, पी.पी.एच. तथा कल्याणपुर कद्दू–1 आदि।

ii) विदेशी किस्में:– अर्सी यलो प्रोलिफिक, पैटीपेन, आस्ट्रेलियन

ग्रीन भारत में पेटीपान, ग्रीन हब्बर्ड, गोल्डन हब्बर्ड, गोल्डन कस्टर्ड और यलो स्टेट नेक नामक किस्में भी छोटे स्तर पर उगाई जाती हैं

2. **विन्टर स्क्वेश/शीतकालीन (कुकरविटा मोस्चेटा) किस्में–**

i) अर्का सूर्यमुखी, अर्का चन्दन, पूसा बिश्वास, पूसा विकास, सी. ओ– 1 एवं 2 तथा अम्बिली।

ii) विदेशी किस्में:– भारत में बटरनट, ग्रीन हब्बर्ड, गोल्डन हब्बर्ड, गोल्डन कस्टर्ड और यलो स्टेट नेक, येलो कूकनेक, स्माल सुगर तथा केण्टुकीफील्ड नामक किस्में भी छोटे स्तर पर उगाई जाती हैं।

3.भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान (आई.आई.वी.आर.) से विकसित किस्में:– काशी उज्जवल, काशी हरित, काशी सुरभि तथा काशी धवल।

- काशी शुभांगी छप्पन भोग कद्दू की 50–55 दिन में पहली तुड़ाई होती है। इसके अलावा यह लगातार 70 दिन तक फल देती है। छप्पन भोग कद्दू की औसत उपज 325–350 क्वि./हे. है। एक हेक्टेयर में 7000 –7500 पौधे लगाए जाते हैं।

भूमि एवं उसकी तैयारी – काशीफल की खेती प्रायः सभी प्रकार की मृदा में की जा सकती है। अच्छी पैदावार लेने के लिए दोमट या बलुई दोमट भूमि जिसमें जीवांश की पर्याप्त मात्रा हो तथा उचित जल निकास वाली भूमि सर्वोत्तम रहती है। गंगा जमुना नदी के दोआब क्षेत्र की कछारी मिट्टी में भी उचित जीवांश मात्रा मिलाकर अच्छी खेती की जाती है। अधिक अम्लीय तथा क्षारीय भूमि इसकी खेती के लिए नुकसानदायक साबित होती है। 6.0 से 7.2 पी.एच. मान वाली भूमि में अच्छी उपज देती है। पहली गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से कर के दो से तीन जुताई देशी हल या हैरो से करते हैं। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरा और समतल करना चाहिए।

बीज के अंकुरण के समय भूमि का तापमान 18–20 डिग्री सेन्टीग्रेड होना चाहिये तथा पौधे की वृद्धि एवं विकास हेतु 24–27 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है।

पूर्वोत्तर प्रदेश में छप्पन कद्दू की बुवाई सितम्बर माह के द्वितीय पखवाड़े से लेकर नवम्बर के प्रथम पखवाड़े तक करें। लो टनल की सुविधा होने पर दिसम्बर माह में भी बुवाई की जा सकती है।

फसल चक्र:– काशीफल को निम्नलिखित फसल चक्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

1. भिण्डी–मटर–काशीफल(कद्दू)
2. चौलाई–पालक–काशीफल
3. तोरई–मूली–काशीफल
4. मक्का–शलजम–काशीफल
5. लोबिया–पत्तागोभी–काशीफल
6. करेला–मटर–काशीफल
7. ग्वार–गाजर–काशीफल
8. अरबी–काशीफल–ग्वार
9. टमाटर–फ्रेंचबीन–कद्दू
10. भिण्ड़ी–आलू–कद्दू

बुवाई का समय तथा बीज की मात्रा :–

उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में काशीफल की फसल वर्ष में दो बार बोई जाती है। ग्रीष्म कालीन फसल की बोआई मुख्यतः फरवरी–मार्च में की जाती है। नदी के कछारी क्षेत्रों में तो दिसम्बर–जनवरी माह में ही बीज बो दिये जाते हैं। बरसात की फसल के लिए बीज जून–जुलाई में बोया जाता है। एक हेक्टेयर की बुवाई करने के लिए 7–9 किलोग्राम बीज पर्याप्त रहता है। पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी बुवाई मार्च–अप्रैल में की जाती है।

बीज बोने की विधि तथा दूरी – सामान्यतः बरसात वाली

फसल की बुवाई समतल खेत में 3 मीटर की दूरी पर कतार बनाकर छोटे थाले/ कुण्ड 60X60X45 से.मी. आकार के गड्डे या थालों में करते हैं। थाले से थाले की दूरी 1.5 मीटर रखी जाती है। प्रत्येक क्यारी में 8–10 बीज बोने चाहिए।

कतार से कतार की दूरी 2–2.5 मीटर रखते हैं तथा कुण्ड से कुण्ड की दूरी 1.5 मीटर रखी जाती है। प्रत्येक कुण्ड या थाले में 4–5 बीज एक ही जगह बोने चाहिये। बीजों के अंकुरण पश्चात् दो स्वस्थ पौधों को छोड़कर बाकी के पौधे उखाड़ देने चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में पानी की अधिक आवश्यकता पड़ती है। अतः इस फसल की बोआई नालियों में करना अच्छा रहता है। इसके लिए 2.5 से 3 मीटर के फासले पर लगभग 1 मीटर चौड़ी नालियॉ बनाते हैं और इन्हीं नालियों के दोनों किनारों पर दो थालों या कुण्डों में बीज की बुवाई की जाती है। कुण्ड से कुण्ड की दूरी 1–1.5 मीटर रखते हैं।

खाद एवं उर्वरक – काशीफल की अच्छी उपज लेने के लिए खाद एवं उर्वरक दोनों का ही समुचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। खेत की प्रारम्भिक जुताई के समय 200 से 250 क्विं./हेटेक्यर के हिसाब से गोबर की अच्छी सड़ी हुई खाद या वर्मीकम्पोस्ट 100–150 क्विं. मिला देना चाहिए। 20 किलोग्राम नीम खली, 30 किलो ग्राम अरण्डी की खली, यूरिया 120 किलोग्राम, एस. एस.पी. 500 किलोग्राम, एम.ओ.पी. 75 किलोग्राम तथा 60 किलोग्राम नत्रजन, 80 किलोग्राम स्फुर/फास्फोरस, 45 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर के उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा तथा फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा को बुवाई से पूर्व अन्तिम जुताई के समय मिट्टी में अच्छी तरह मिला कर खेत तैयार कर देना चाहिए। नाइट्रोजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर दो बार में पौधों में 4–5 पत्तियॉ निकल आने पर यानि बुवाई के 22–25 दिन बाद अंतिम शेष मात्रा फूल आते समय टापड्रेसिंग द्वारा पौधों के चारों ओर दे देनी चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि उर्वरक पौधों की जड़ व तने के सम्पर्क में न आने पाये।

सिंचाई एवं जल निकास – यदि बीज उगने के लिए खेत में पर्याप्त नमी न हो तो पहली सिंचाई बोआई के बाद शीघ्र कर दें। दूसरी और तीसरी सिंचाई भी जल्दी यानि 4–6 दिन के अन्तर से करें। ऐसा करने से बीज शीघ्र तथा आसानी से उग आयेंगें। ग्रीष्म ऋतु की फसल में 8–10 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। आवश्यकतानुसार 7–10 दिन के अन्तर से सिंचाई करते रहना चाहिए। बरसात की फसल में प्रायः सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यदि वर्षा लम्बे समय तक न हो तो सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिए। बरसात की फसल में उचित जल–निकास की व्यवस्था का होना आवश्यक है ताकि खेत में वर्षा का फालतू पानी इकट्ठा न होने पाए।

खरपतवार नियंत्रण – काशीफल की अच्छी पैदावार लेने के लिए खेत में खरपतवार नहीं उगने देना चाहिए। इसके लिए गर्मी की फसल में 2–3 बार तथा बरसात की फसल में 3–4 बार निराई गुड़ाई की आश्यकता पड़ती है। खुर्पी या फावड़े से निराई–गुड़ाई का कार्य किया जा सकता है इससे खरपतवार तो समाप्त हो ही जाते हैं साथ ही भूमि में वायु का समुचित संचार होता है। परिणामस्वरूप पौधों की अच्छी बढ़वार होती है। अधिक खरपतवार की दशा में एलाक्लोर नामक रसायन की 1.5 लीटर मात्रा को 750–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए अथवा ऑक्सीलूरोफेन नींदानाशी की 1.2 किलोग्राम मात्रा 750 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जा सकता है।

पादप वृद्धि नियामक – कद्दू/काशीफल में 2–4 पत्ती की अवस्था पर इथ्रेल के 250 पी.पी.एम. (250 मिलीग्राम/ली.) सान्द्रण वाले घोल का छिड़काव करने से मादा पुष्पों की संख्या बढ़ जाती है तथा उपज अधिक मिलती है।

फल तुड़ाई – आमतौर पर बोने के 75–90 दिन बाद हरे फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। फलों को तेज धार वाले चाकू से काटना चाहिए ताकि पौधों को क्षति न पहुंचे। बाजार की मांग के अनुसार ही हरे कच्चे या पीले पके हुए फल तोड़ने चाहिए। काशीफल अधिकतर पकने पर ही तोड़े जाते हैं क्योंकि कच्चे फलों को ज्यादा दिन नहीं रखा जा सकता है।

उपज – बरसात की फसल गर्मियों की फसल से अधिक पैदावार देती हैं इसकी औसत उपज 300–325 क्विं/हे. मिल जाती है।

कीट एवं रोग –

कीट नियंत्रण – कद्दू की फसल को मुख्य रुप से निम्नलिखित कीट हानि पहुँचाते हैं –

1. रेड पम्पकिन बीटल (लाल कद्दू भृंग)– यह लाल रंग का कीट होता है जो पौधों के उगते ही उन्हे खाना प्रारंभ कर देता है। मिथाइल पैराथियान 0.2 प्रतिशत पाउडर 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर लगाते समय या क्लोरोपायरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. दवा का 0.2 प्रतिशत घोल का अंकुरण के 10 दिन पश्चात छिड़काव करें। इनकी रोकथाम हेतु सेविन–10 प्रतिशत धूल का 15–20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से बुरकाव करें अथवा सेविन 50 प्रतिशत घुलनशील धूल के 0.2 प्रतिशत (200 ग्राम दवा 100 लीटर पानी में) का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

2. फल मक्खी (फ्रूट फ्लाई) – इसका आकार घरेलू मक्खी की तरह होता है। मादा मक्खी फलों की ऊपरी सतह के ठीक नीचे अण्डे देती है। अण्डे फल के भीतर ही फूटते हैं तथा छोटे–छोटे कीड़े निकलते है जिन्हे मैगट कहते है। यह मैगट फलों के गूदे को खाते हैं। कीट ग्रस्त फल विकृत या सड़ जाते हैं। कीट से प्रभावित

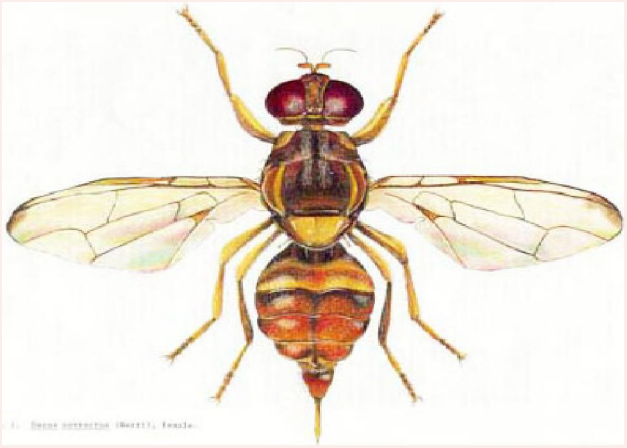

फलों को नष्ट कर देना चाहिए। इनकी रोकथाम के लिये डाइक्लोरोवास दवा का 2 मि.ली. एवं 100 ग्राम गुड़ प्रतिलीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें अथवा जैसे ही फूल आने लगें, मैलाथियान 0.02 प्रतिशत दवा का छिड़काव करना चाहिए। व्यस्क मादा मक्खी को मारने के लिये विषचारा का उपयोग करना चाहिए। इसके लिये आधा (1/2) कि.ग्रा. प्रोटीन हाइड्रोजाइलेट तथा 1.25 लीटर 50 प्रतिशत मैलाथियान के मिश्रण को काम में लाना चाहिए, साथ ही बोरी के टाट के टुकड़ों पर निम्नलिखित चीजों से बनाया गया मिश्रण लगाकर खेत में कई स्थान पर रखना चाहिए ताकि कीट इसे खाकर मर जाऐं।

- ईस्ट प्रोटीन 500 ग्रा.
- मैलाथियान (25 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 900 ग्राम
- पानी 13.5 लीटर

3. ऐपीलेक्ना बीटल – इस कीट पर काले रंग के धब्बे होते हैं। इसके प्रौढ़ तथा शिशु दोनों अंकुरित हो रहें छोटे पौधों को खा जाते हैं। इनका आक्रमण पत्तियों पर भी होता है तथा ये पत्तियों की शिराओं के बीच के हरे भाग को खाकर उसे फीते के रुप में बना देते हैं। इस कीट का नियंत्रण रेड पम्पकिन बीटल के समान ही किया जाता है।

4. कट वर्म – इस कीट की सुण्डी रात में निकल कर छोटे पौधों को भूमि की सतह से काट देती है। इस कीट की रोकथाम हेतु सेविन–10 प्रतिशत धूल का 15–20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से बुरकाव करना चाहिए अथवा हैप्टाक्लोर धूल को 20–25 कि.ग्रा. /हेक्टेयर की दर से फसल बोने से पहले खेत की मिट्टी में मिला देना चाहिए।

5. माहू/ऐफिड – ये अत्यंत छोटे–छोटे हरे रंग के कीट होते हैं जो पौधों के कोमल भागों से रस चूसते हैं। ये विषाणु जनित रोगों को फैलाने का भी काम करते हैं। पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं जिससे पौधों की ओज एवं वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इनकी रोकथाम के लिये फल आने से पहले की अवस्था में रोगोर अथवा मैटासिस्टाक्स 0.02 प्रतिशत (20 मि.ली. 10 लीटर पानी में) दवा का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

रोग – कद्दू की फसल में निम्नलिखित रोग अथवा व्याधियाँ लगती है –

1. चूर्णिल असिता (पाउडरी मिल्ड्यू) –इस रोग के फलस्वरुप पत्तियों की निचली सतह पर तथा बाद में पत्तियों के

दोनों ओर सफेद व पीले रंग का चूर्ण जैसा इकट्ठा हो जाता है। पत्तियों के अलावा तना तथा फल एवं फूल पर भी आक्रमण होता है। पत्तियों की सामान्य वृद्धि रुक जाती है और पीली पड़ जाती है। इस रोग का प्रकोप सूखे मौसम में अधिक होता है। इसके बचाव के लिये डीनोकेप 1.0 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। 0.03 प्रतिशत कैरोथेन दवा (30 ग्राम दवा 100 लीटर पानी में) के 15 दिन के अंतराल पर लगभग तीन छिड़काव करने चाहिए। कुछ किस्मों पर गंधक के चूर्ण का बुरकाव से हानि होती है। अतः इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। प्रोपेकोनोजोल अथवा हैक्साकोनोजोल दवा के 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

2. मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्ड्यू) – यह फफूंद/कवक केवल पत्तियों पर आक्रमण करती है। यह रोग अधिक गर्मी, वर्षा एवं नमी वाले क्षेत्रों में होता है। रोगग्रस्त पौधे की पत्तियों के ऊपरी भाग पर पीले धब्बे तथा निचले भाग पर बैंगनी अथा धूसर रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। उग्र अवस्था में तना पर भी आक्रमण होता है तथा पत्तियों की निचली सतह पर रुई के समान मुलायम वृद्धि होती है। रोगी पौधों पर फल कम लगते हैं। इसकी रोकथाम के लिए डाइक्लोरोवास दवा का 2 मि.ली. एवं 100 ग्राम गुड़ प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें अथवा डाइथेन एम. 45 अथवा डाइथेम जेड–78 दवा के 0.2 प्रतिशत घोल (200 ग्राम दवा 100 लीटर पानी में) के 10–15 दिन के अन्तर पर लगभग 3 छिड़काव करने चाहिए । ब्लाइटाक्स 50 घोल (2.5 ग्रा. दवा 1.0 लीटर पानी) अथवा फफूंद नाशक क्लोरोथैलोनील 1.5 किलोग्राम

मात्रा को 750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

3. श्याम वर्ण रोग (एन्थ्रेक्नोज) – यह रोग कोलेटोट्राइकम प्रजाति की फफूँदियों द्वारा होता है। गर्म एंव नम मौसम में रोग का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग में फलों और पत्तों पर धब्बे पड़ जाते हैं जिसके कारण पत्तियाँ झुलसी हुई मालूम पडती हैं।

रोग के नियंत्रण के लिए डाइथेन एम.–45 अथवा डाइथेन जेड–78 के 0.2 से 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। यह रोग बीज जनित है। अतः बीज का बीजोपचार बुबाई पूर्व करना चाहिये।

4. विषाणु रोग – कई प्रकार के विषाणु कद्दूवर्गीय सब्जियों में आक्रमण करते हैं। रोग के प्रभाव से पत्तियों पर पीले धब्बे पड़ जाते हैं तथा पत्तियाँ सिकुड़ कर सूख कर गिर जाती है। फलों पर हल्की कर्बुरण से लेकर मस्सेदार वृद्वि दिखाई पड़ती है। फल आकार में छोटे, टेड़े–मेढ़े तथा संख्या में कम लगते हैं। यह रोग प्रमुख रुप से माहू तथा सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।

रोग नियंत्रण हेतु 0.03 प्रतिशत मेटासिस्टोक्स या 0.2 प्रतिशत रोगोर दवा का छिडकाव कर माहू पर नियन्त्रण रखना चाहिये। रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिये तथा प्रतिरोधक किस्मों का चयन कर उगाना चाहिये ।

भण्डारण – काशीफल के अच्छी तरह पके हुए फलों को 4–5 माह तक भण्डारित किया जा सकता है। भण्डारण के लिए 10–15 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान तथा 75 प्रतिशत आपेक्षित आर्द्रता ठीक रहता है।

बीज उत्पादन – काशीफल का अच्छा बीज प्राप्त करने के लिए काशीफल के खेत का काशीफल की अन्य दूसरी किस्मों के खेत से कम से कम 400 मीटर की दूरी पर पृथक होना चाहिए। ताकि उसमें दूसरी किस्म से पर परागण न हो सकें। अवांछनीय पौधों को प्रारम्भिक अवस्था में ही निकाल देना चाहिए। यदि फिर भी कुछ अवांछनीय पौधे रह जाऐं तो फूल आने के समय अवश्य निकाल देना चाहिए। फसल की कटाई फलों के पूर्ण रूप से पक जाने पर ही करनी चाहिए। बीजों को गूदे से अलग करके साफ पानी से धोने के बाद धूप में अच्छी तरह से सुखा लेना चाहिए ताकि बीजों में 8 प्रतिशत से अधिक नमी न रहने पाए। एक हेक्टेयर से लगभग 2–3 क्विंटल बीज प्राप्त हो जाता है।

शून्य लागत प्राकृतिक खेती: किसानों की दोगुना आय में लाभकारी

मोती लाल मीणा, ऐश्वर्य डूडी और धीरज सिंह
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, काजरी, कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली–मारवाड़ (राजस्थान) 306 401

पिछले एक दशक में भले ही खाद्यान्न उत्पादन में 33.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई है लेकिन इस अवधि में देश के किसानों की स्थिति में आशातीत सुधार नहीं हुआ है। यह एक गंभीर चिंता का विषय है। रसायन जैसे उर्वरक या कीटनाशक मानव गुणसूत्रों में उत्परिर्वतन करते हैं। इनका उपयोग फसल की वृद्धि को बढ़ाने के लिए अधिक से अधिक मात्रा में किया जाता है, ताकि ये राजस्व में वृद्धि कर सकें। निर्जीवकृत बीज, निवेश और बाजार किसानों के लिए दुर्गम और महंगें हैं। उच्च उत्पादन लागत ऋण के लिए उच्च ब्याजदर, फसलों की बाजार कीमतें, जीवांश ईंधन आधारित निवेशों की बढ़ती लागत और निजी बीजों के कारण भारतीय किसान तेजी से कर्ज के दुश्चक्र में फंसते जा रहे हैं। जैविक खेती, नवप्रर्वतनों में शून्य लागत प्राकृतिक खेती (जेड.बी.एन.एफ.), किसानों की समस्या के समाधान के रूप में लोकप्रियता हासिल कर रही हैं। वर्तमान में 50 लाख से अधिक किसान खेती की इस प्रणाली का प्रयोग कर बंजर भूमि को उपजाऊ भूमि में परिवर्तित कर रहे हैं।

शून्य लागत प्राकृतिक खेती के मुख्य अवयव –

जीवामृत –

यह गाय के गोबर (20 किलो), गोमूत्र (5–10 लीटर), गुड़ (20 कि.ग्रा.) और द्विपत्रियों के आटे (2 किलोग्राम) से बना है। प्रत्येक सिंचाई चक्र के साथ फसलों पर यह प्रयुक्त होता है। यह पोषक तत्व प्रदान करता है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि एक उत्प्रेरक घटक के रूप में भी कार्य करता है, जो मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों को भी बढ़ावा देता है। तथा केंचुआ गतिविधि को बढ़ाता है। जीवामृत, पौधों में कवक और जीवाणुजनित रोगों को रोकने में भी मदद करता है। इसके लिए जीवामृत केवल अवस्थातंर के पहले 3 वर्षों के लिए आवश्यक है, उसके बाद यह प्रणाली आत्मनिर्भर हो जाती है।

बीजामृत –

यह मूलरूप से पानी (20 लीटर), गोबर (5 किलोग्राम), मूत्र (20 लीटर), चूना (50 ग्राम), और सिर्फ एक मुट्ठी मिट्टी से बना है। बीजामृत एक बीज उपचार है, जो तरूण जड़ों को कवक के साथ–साथ मृदाजनित और बीज जनित रोगों से बचाने में प्रभावी है।

आच्छादन पलवार –

यह मृदा पलवार, पुआल या जीवित पलवार द्वारा किया जा सकता है। यह वाष्पीकरण को कम करके, मिट्टी की नमी को संरक्षित करता है। जैविक पुआल में मृदा अधिक समय तक नमी बनाये रखती है तथा उसमें लाभदायक जीवाणु उपलब्ध हो जाते है जो मश्दा की उर्वरता को बनाने में सहायक होते है। यह लाभकारी किसान मित्र केंचुए की वृद्धि में सहायक होती है।

व्हापासा –

सिंचाई को कम किया जाना चाहिए और केवल दोपहर के समय ही सिंचाई का अभ्यास करना चाहिए। पौधों की जड़ों को बहुत अधिक पानी की आवश्यकता होती है, वास्तव में जड़ों को जल वाष्प की आवश्यकता होती है। और इसलिए व्हापासा वह स्थिति है, जहां मिट्टी में हवा के अणु और जल के अणु दोनों मौजूद होते हैं।

कीट प्रबंधन की संरचना और नियंत्रण–

एग्रीअवस्त्रा –

स्थानीय गाय का 10 लीटर मूत्र और एक किलोग्राम तम्बाकू, 500 ग्राम हरी मिर्च, 500 ग्राम स्थानीय लहसुन, 5 कि.ग्रा नीम के पत्तों

के गूदे (मूत्र में संदलित) से बना है। छिड़काव के लिए, 100 लीटर पानी में 2 लीटर ब्रह्मास्त्र लिया जाता है। यह पर्ण लपेट (लीफ रोलर), तनाभेदक (स्टेम बोरर), फलभेदक (फ्रूट बोरर), फलीबेदक (पोड बोरर) जैसे कीटों के प्रति प्रभावी होता है।

ब्रह्मास्त्र –

यह नीम, सीताफल, लैंटर्न कैमेलिया, अमरूद, अनार, पपीते और सफेद धतूरा के पत्तों को संदलित और उबालकर बनाया जाता है। इसका उपयोग सभी चूसने वाले कीटों, फलभेदक कीटों आदि को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है।

नीमास्त्र –

यह स्थानीय गोमूत्र (5 लीटर), गोबर (5 किलोग्राम) और नीम के पत्तों और नीम की लुग्दी (5 किलोग्राम) से बनता है, जो 24 घंटे के लिए किण्वित होता है। इसका उपयोग चूसने वाले कीटों और मिलीबग को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। शून्य लागत प्राकृतिक खेती, बीज, उर्वरक और पादप सुरक्षा रसायनों की लागत की बचत के लिए सही है। इस नई प्रणाली ने किसानों को कर्ज के जाल से मुक्त किया है और उन्हें खेती को आर्थिक रूप से व्यवहार्य उद्यम बनाने के लिए आत्मविश्वास की भावना प्रदान की है।

शून्य लागत कृषि प्रणाली के मुख्य घटक –

■ केवल स्थानीय व्यक्तियों द्वारा सस्ती उपयोगी वस्तुएं काम में ली जाती है। जिसका खर्चा शून्य होता है क्योंकि गांव में उपलब्ध वस्तुओं का प्रयोग करके मचान, बिजुला, झटका मशीन, कांटेदार बाढ़ आदि को उपयोग में लिया जाता है।

■ भारतीय गाय का गोबर और मूत्र चमत्कारी माना जाता है, लेकिन किसी भी देसी गाय का गोबर और मूत्र भी अच्छा रहता है।

■ गोबर और मूत्र का अधिकतम उपयोग करने के लिए, यह सुनिश्चित करें कि गोबर जितना संभव हो उतना ताजा हो और मूत्र उतना ही जीर्ण।

■ एक एकड़ जमीन के लिए प्रति माह 10 किलोग्राम स्थानीय गोबर की आवश्यकता होती है। औसत गाय एक दिन में 11 किलोग्राम गोबर देती हैं, इसलिए एक गाय के गोबर से प्रति माह 30 एकड़ भूमि में खाद डालने में मदद मिलती है।

■ मूत्र, गुड़ और द्विपत्रियों के आटे को योजक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

■ खेत के चारों ओर वृक्ष लगाने के लिए खेजड़ी, देशी बबूल, कूमट, लहसोरा, नीम, करोंदा, पारकिन सोनिया, अगेव, पीलू, आदि वृक्षों को मेढ़ों पर लगाकर फसलों व फल वृक्षों को लू और शीत लहर से बचा सकते हैं।

■ स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सामान को सही समय पर उपयोग किया जाता है। जो फसल सुरक्षा के लिए काम आते हैं।

फसलों को जंगली जानवरों और पक्षियों से सुरक्षा –

फसल सुरक्षा के अभाव में किसानों की लगभग 15–20 प्रतिशत फसल खराब हो जाती है, तथा यह नुकसान और भी बढ़ सकता है। समय पर सही तरीके से फसल सुरक्षा न करने पर किसान की आय बढ़ने के बजाय घटने लगती है। हमारे देश में फसल सुरक्षा के लिए प्राचीन समय से परंपरागत विधियों को अपनाकर किसान फसलों की सुरक्षा करते हैं जिसमें शून्य खर्चा आता है। आज के आधुनिक युग में फसलों की सुरक्षा के लिए कृत्रिम तकनीकों का प्रयोग किया जाता है जो मंहगी होने के साथ–साथ पर्यावरण के लिए घातक होती है। जैसे रासायनिक दवाओं का प्रयोग, एल.ई.डी लाईट, पटाखे, बंदूक, बिजली के तार, काटेंदार तार द्वारा फेंसिंग, ट्रैक्टर से आवाज करना, डीजल इंजन द्वारा आवाज करा कर जंगली जानवरों और पक्षियों को खड़ी फसल से भगाना आदि। इसी प्रकार फसलों में कीड़ों व रोग के लिए रासायनिक दवाओं का प्रयोग करने से भूमि की उर्वराशक्ति कम हुई है और इसके साथ

ही फसल की गुणवत्ता भी प्रभावित हुई है और मानव स्वास्थ्य पर भी गलत प्रभाव पड़ा है। इन सब तरीकों में वातावरण को प्रभावित करने के साथ लाभकारी जानवर और पक्षियों का भी विनाश हुआ है जिससे प्रकृति को हानि पंहुची है। इससे खेती की लागत भी ज्यादा आती है और किसान को हानि होती है। प्राचीन समय में इस समस्या को दूर करने के लिए किसान परंपरागत वस्तुओं का उपयोग करके जंगली जानवरों और पक्षियों से फसलों का बचाव करते थे, जो लाभकारी और शून्य लागत पर तैयार की जाती थी जिससे किसानों की आय भी बढ़ती, वातावरण भी शुद्ध रहता तथा पर्यावरण भी प्रभावित नहीं होता था। प्राचीनकाल में फसलों और फलों को जानवरों के प्रकोप से बचाने के लिए किसान कम लागत वाले प्रभावी तरीके अपनाने से फसल सुरक्षा के लिए लाभकारी सिद्ध हुए हैं। किसान खेती की लागत को कम करने के लिए आज भी परंपरागत तकनीकों को अपनाकर फसलों को जंगली जानवरों से बचाते हैं। परंपरागत तकनीकों को निम्न प्रकार किसान उपयोग में लेते हैं।

बिजूका या बिजकना –

बिजूका द्वारा जंगली जानवरों और पक्षियों को भगाने का यह एक परंपरागत लोकप्रिय तरीका है जो प्राचीन समय से ही प्रचलित है तथा फसल सुरक्षा के लिए कारगर भी माना जाता है। बिजूका को कृषक अपने घर पर बेकार फटे–पुराने कपड़ों से तैयार करते हैं जिसमें अलग–अलग चेहरा बनाया जाता है और सिर बनाने के लिए मिट्टी की मटकी का उपयोग करते हैं। इसे फसल में इस प्रकार लगाते हैं कि जानवरों व पक्षियों को खड़ा हुआ किसान दिखे तथा इसके गले और हाथों में बजने वाली घंटी या खाली बोतल, लटका देते हैं जो हवा के वेग से बजती रहती है। जिससे जंगली जानवर और पक्षी दूर भाग जाते हैं तथा फसल को नुकसान नहीं होता है। जंगली जानवर जैसे सुअर, नीलगाय, आवारा पशु, हिरण, चिंकारा आदि जंगली जानवरों को फसल से भगाने में 85 प्रतिशत तक लाभकारी होता है। बिजूका खेत के मध्य में लगाते है तथा जहां से जंगली जानवरों की खेत में आने की सम्भावना हो वहां पर किसान बिजूका को लगाते हैं जिससे फसलों को बचाया जा सके और यह उपाय भी किसान की आय वृद्धि करने में महत्वपूर्ण होता है।

बोल्टबोटल मॉडल द्वारा फसल सुरक्षा –

कृषकों की आज फसल उत्पादन में सबसे बड़ी समस्या जंगली जानवरों और आवारा पशुओं की होती है। आजकल किसान

पैदावार का अधिक खर्च फसल सुरक्षा पर करता है क्योंकि फसलों को ज्यादा हानि नीलगाय, सुअर, हिरण और आवारा पशु से होता है जिसका मुख्य कारण जंगलों की कटाई व वनों का सिकुड़ता आकार है। अब जंगली जानवर जंगल से चारे और पानी की तलाश में खड़ी फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। इनसे बचने के लिए किसान अपने खेत के मेढ़ों पर खड़े वृक्षों की शाखाओं पर एक रस्सी की सहायता से कांच की बोतल के साथ एक नट बोल्ट और एक प्लास्टिक बोर्ड, या हार्ड गत्ता बोतल के सहारे पेड़ की शाखा से लटका देते हैं। एक हेक्टेयर में लगभग 5 बोल्टबोटल मॉडल लगा देते हैं। यह एक बहुत प्रभावी तकनीक है जो जंगली जानरों के साथ–साथ पक्षियों को

भगाने में लाभकरी विधि है । जब हवा चलती है तो नट–बोल्ट बोतल से आकर टकराकर आवाज करता है व ध्वनि निकलती है जिससे आस–पास जानवर और पंक्षी दूर भाग जाते हैं यह ध्वनि रात में एक से दो किलोमीटर तक ध्वनि सुनाई देती है और फसल को बचाया जाता है। इसे बनाने में शून्य लागत आती है तथा इसका उपयोग बहुत लाभकारी होता है।

प्लास्टिक पट्टियां या चमकीला कपड़ा खेत की मेढ़ों पर लगाना –

किसान इस तकनीक को भी बहुत अपनाते हैं जिससे जंगली जानवर दूर भाग जाते हैं। प्लास्टिक पट्टी या कपड़ें की पट्टी हवा से हिलती रहती है जो जानवरों की आंखों में रिफलेक्टस और कम्पन से ध्वनि करती है जिससे नीलगाय व जंगली सुअर दूर भाग जाते हैं। इसमें प्रति 100 मीटर पर लगाने से 150 रूपये तक का खर्च आता है। यह विधि बड़े आकार के खेतों के लिए लाभकारी है। इसमें बाजार से प्लास्टिक पट्टी या चमकीले कपड़े की पट्टी फसल के चारों ओर मेढ़ पर लकड़ी के खंभो से बांध देते हैं जिससे फसल को सुरक्षा मिलती है।

मचान द्वारा फसल सुरक्षा –

जहां पर जंगली जानवर और पक्षियों की अधिक संख्या हो व पहाड़ी क्षेत्रों में किसान फसलों, सब्जियों, फल वृक्षों को बचाने के लिए

खेत में एक लकड़ी के डंडों व घास–फूस से 10 से 15 फिट ऊंचाई वाला मचान बनाते हैं जिससे जानवर और पक्षी इसे देख कर दूर भाग जाते हैं। मचान दो प्रकार के होते हैं। एक जिसमें किसान एक चारपाई ऊपर खंभों से बांधकर बनाते हैं जिसमें एक आदमी रातभर रहकर फसलों की सुरक्षा करता है तथा इसमें वर्षा का पानी और हवा का प्रवेश नहीं होता, जो किसान की सुरक्षा के लिए उपयोगी होता है। दूसरा छोटा मचान होता है जिसे घास–फूस द्वारा बनाया जाता है इसमें बैठने की जगह नहीं होती तथा इसमें बजने वाले यंत्र जैसे लोहे का पीपा, प्लास्टिक पीपी, ढब्बा भी काम में लिया जाता है जिससे हवा द्वारा आवाज आती रहती है। और फसलों को जानवरों से सुरक्षा मिलती रहती है।

कांटेदार बाड़ लगाकर फसल सुरक्षा –

फसलों को आवारा पशुओं और जंगली जानवरों से बचाने के लिए किसान अपने खेत के चारों ओर गहरी बाड़ लगाते हैं इसमें देशी बबूल, बेर, जाड़, बिलायती बबूल, इजरायली बबूल का प्रयोग करते हैं। इन सभी जंगली पौधों में नुकीले कांटे होते हैं जिससे जानवर इसमें प्रवेश नहीं करते और फसलों को सुरक्षा प्रदान होती है। खेत के चारों ओर बाड़ लगाकर फसलों को बचाया जाता है। यह बहुत सस्ता और लम्बे समय तक प्रभावी होता है। इसमें खर्चा शून्य और केवल लगाने में मजदूरी का खर्चा आता है।

खेत के चारों ओर कांटेदार वृक्ष या कैक्टस लगाकर फसल सुरक्षा करना –

यह विधि बहुत लाभकारी होने के साथ –साथ पर्यावरण को भी शुद्व रखती है और फसलों को जंगली जानवरों से बचाव के साथ

फसलों व फल वृक्षों को गर्म व ठंडी हवाओं से बचाती है। इसके साथ ही पालतू पशुओं जैसे भेड़, बकरी, गाय, भैंस आदि के लिए चारा भी मिलता रहता है जो किसान आय को वृद्धि करने में लाभकारी होता है। यह बहुत लोकप्रिय और कम खर्च वाली तकनीक है जिसे अपनाकर किसान फसलों की सुरक्षा करते हैं।

मेढ़ों पर वृक्ष लगाकर फसल को लू और ठंड से बचाना –

फल व सब्जियों को गर्म लू या शीत लहरों बचाने के लिए किसान खेत के चारों ओर छायादार बड़े वृक्ष लगाकर फसलों की सुरक्षा के साथ–साथ वृक्षों से लकड़ी भी प्राप्त करते हैं जो किसानों की दोगुना आय के लिए लाभकारी होता है। खेत के चारों ओर खेजड़ी, नीम, कुमट, करोदां, लहसोड़ा, इमली, जंगल जलेबी, शीशम, देशी बबूल लगाकर खेत की सुरक्षा के साथ अतिरिक्त आय मिलती है। यह किसान की आय दोगुना करने में बहुत अधिक लाभकारी है।

खड़ी फसल पर ताजा गोबर का छिड़काव –

फसलों, सब्जियों और फल वृक्षों को जंगली जानवरों और पक्षियों से बचाने के लिए ताजा गोबर का घोल बनाकर खेत के चारों ओर 5 फीट चौड़ी पट्टी तक छिड़काव करने से नीलगाय और आवारा पशु, गोबर की गंध से फसल की ओर आकर्षित नहीं होते हैं जिससे फसल की क्षति नहीं होती है। यह तरीका फसल में पोषक तत्व के साथ फसल सुरक्षा के लिए भी उपयोगी व पर्यावरण के लिए भी लाभदायक है।

सोलर लाइट द्वारा फसल सुरक्षा –

खड़ी फसल जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, गेहूँ, चना, मूंग, तिल, मसूर, सब्जियां आदि फसलों को नीलगाय, सुअर, हिरण, भालू और आवारा पशुओं द्वारा बहुत अधिक हानि होती है। किसान का काफी खर्च फसल सुरक्षा पर लगता है। इसके लिए स्थानीय तकनीशियन द्वारा निर्मित झटका मशीन का उपयोग किया जाता है जिससे जानवर को बिजली का हल्का करंट लगता है और जानवर दूर भाग जाते हैं। झटका मशीन में लोहे का तार लगा होता है जिसका सम्पंर्क एक मशीन से कर देते हैं जो दिन में सूर्य की रोशनी से चार्ज हो जाती है और रात में उसमें बिजली छोड़ देते है। जब जानवर इसके सम्पर्क में आता है तो उसे हल्का करंट लगता है। यह मशीन मंहगी होती है लेकिन प्रभावी अधिक होती है।

फसल के चारों ओर कांटेदार फसल व ढेंचा की फसल लगाना –

किसान अपनी मुख्य फसल को बचाने के लिए खेत के चारों ओर कांटेदार फसल या ढेंचा की फसल लगा देते हैं जिससे जानवर मुख्य फसल को हानि नहीं पहुंचाते हैं और किसान की मुख्य फसल बच जाती है। इसमें फसल सुरक्षा के साथ–साथ किसान को दोहरा लाभ भी मिल जाता है। ढेंचा की बाड़ से मृदा उर्वरता बढ़ती है तथा कुसुम कांटों की फसल बाड़ से फसल सुरक्षा हो जाती है तथा कुसुम पकने पर तेल भी प्राप्त हो जाता है।

छोटानागपुर पठारी क्षेत्र में आधुनिक कृषि उपकरणों को अपनाने में अड़चन

अनुकूल प्र० अनुराग, वरिष्ठ शोधकर्ता,
पी0के0 सुंदरम, वैज्ञानिक, डी0के0 राघव, प्रमुख कृषि विज्ञान केंद्र रामगढ,
उज्जल कुमार और बिकाश सरकार, प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
का पूर्वी अनुसंधान परिसर पटना, 14 बिहार

झारखंड की आदिवासी आबादी अपनी आजीविका के लिए मुख्य रूप से कृषि और मजदूरी पर निर्भर है। रामगढ़ जिले की आदिवासी आबादी लगभग 21 प्रतिशत है। छोटानागपुर पठारी क्षेत्र के अधिकांश आदिवासी किसानों के पास छोटी जोत की भूमि है। परंपरागत रूप से भूमि पर आदिवासियों का कब्जा था लेकिन धीरे–धीरे इसे सरकारों द्वारा कोयला खनन और खनिज अन्वेषण कंपनियों को हस्तांतरित कर दिया गया। आदिवासी कृषि प्रणाली में यांत्रिक शक्ति की तुलना में मानव और पशु शक्ति का अभी भी अधिक प्रयोग है। परंपरागत रूप से इस क्षेत्र के किसान, कृषि कार्यों के लिए कई छोटे उपकरणों और औजारों का उपयोग कर रहे हैं जो स्थानीय रूप से उनकी आवश्यकताओं के अनुसार विकसित और निर्मित किए गए हैं। पारंपरिक उपकरण वे होते हैं जो प्राचीन समय में आविष्कार किए गए थे और इनका उपयोग कई वर्षों तक हुआ। कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए इन उपकरणों का उपयोग हाल तक और कहीं कहीं अभी भी किया जा रहा है। आदिवासी किसानों के अधिकांश उपकरण स्थानीय कारीगरों द्वारा बांस, लकड़ी और लोहे से बने होते हैं। लेकिन अब धीरे–धीरे उन्होंने मानकीकृत कारखाना–निर्मित उपकरणों को अपनाना शुरू कर दिया है जो किफायती भी होते हैं। आदिवासियों के पारंपरिक कृषि उपकरण पुरुष और महिला दोनों उपयोग कर सकते हैं। प्रत्येक उपकरण का उपयोग किसी विशेष कृषि कार्य के लिए किया जाता है जैसे कि भूमि की तैयारी, बुवाई, निराई, सिंचाई, कटाई, कटाई के बाद के प्रसंस्करण और कृषि उपज का परिवहन आदि। वर्तमान में उपयोग में आने वाले पारंपरिक कृषि उपकरणों कें बारे में जानकारी एकत्र करने के लिए रामगढ़ जिले के

जनजातीय क्षेत्रों में एक सर्वेक्षण किया गया। अध्ययन का उद्देश्य इन पारंपरिक उपकरणों और प्रौद्योगिकी का दस्तावेजीकरण करना था क्योंकि ये पारंपरिक उपकरण और प्रौद्योगिकी, आधुनिक उपकरणों और प्रौद्योगिकी के आने के साथ विलुप्त होने के कगार पर हैं। किसान द्वारा कृषि मशीनों को अपनाने में प्रमुख बाधाओं के बारे में एक निष्कर्ष निकाला गया और कृषि मशीनीकरण में सुधार करने के सुझाव भी दिये गए।

यह सर्वेक्षण, रामगढ़ जिले (औसत ऊंचाई 337 एमएसएल) के आराबस्ती, बडका चुम्बा, बहातू, पिपराटांड़, अमरादाग, गन्धौनिया, गोविंदपुर और गरगाली गावों में आयोजित किया गया जो कि आदिवासी बहुल है। आठ गावों में कुल 250 घरों को चुना गया। कृषि पद्धतियों में उनके द्वारा उपयोग किए जाने वाले स्वदेशी उपकरणों से संबंधित जानकारी विशेष रूप से तैयार प्रारूप और सामूहिक चर्चा के माध्यम से एकत्र की गई। पारंपरिक उपकरणों को उनके आयाम, उपकरण की चौड़ाई, निर्माण सामग्री, वजन आदि जैसे अन्य मापदंडों के साथ सूचीबद्ध किया गया। कृषि यंत्रीकरण सेवाओं में सुधार के लिए किसानों के दस संभावित अवरोधों और छह सुझावों को पास के कृषि विज्ञान केंद्र, गैर सरकारी संगठनों और पंचायत के प्रमुख जैसे विश्वसनीय स्रोतों की समीक्षा के बाद सूचीबद्ध किया गया। चयनित घर के मुखिया का साक्षात्कार एक पूर्व नियोजित प्रारूप के माध्यम से किया गया। कृषि मशीनीकरण अपनाने की बाधाओं को चार बिंदु पैमाने पर मापा गया, अर्थात् सबसे गंभीर, गंभीर, कम गंभीर और बाधा रहित को क्रमशः 4, 3, 2 और 1 की स्कोरिंग दी गयी। सुझावों को तीन–बिंदु पैमाने पर मापा गया, अर्थात् क्रमशः 3, 2 और 1 के स्कोरिंग से सहमत, तटस्थ और असहमत। सारणीकरण, छंटाई और सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया। प्रत्येक बाधा के लिए औसत स्कोर की गणना की गई और रैंकिंग दी गई।

किसानों की भूमि जोत और कृषि यंत्रीकरण प्रतिरूप –

भूमि जोत का प्रतिरूप कृषि मशीनों के उपयोग एवं इनको अपनाने में प्रभावशाली है। सर्वेक्षण किए गए गांवों के अधिकांश आदिवासी किसानों (82 प्रतिशत)के पास छोटे जोत की भूमि थी। 16 प्रतिशत किसानों के पास 2–4 हेक्टेयर जमीन थी और केवल 2 प्रतिशत किसानों के पास 4–10 हेक्टेयर जमीन थी। परिवार का आकार भी एक महत्वपूर्ण कारक है क्योंकि परिवार के सदस्य अपने स्वयं के खेत में मजदूर के रूप में काम करते हैं। सर्वेक्षण किए गए घरों में से, छोटे परिवार का आकार (1–4) केवल 16 प्रतिशत था जबकि परिवार का अधिकांश हिस्सा (68 प्रतिशत) 5 से 8 परिवार के सदस्यों का था।

क्षेत्र के किसानों की भूमि की उपलब्धता क्षेत्र के किसानों का पारिवारिक आकार

किसानों द्वारा पारंपरिक कृषि उपकरणों के उपयोग का प्रतिरूप –

बड़ी संख्या में क्षेत्र के किसान कुदाल, हंसिया , खुरपी , कुल्हाड़ी, दाऊ आदि उपकरणों का उपयोग करते हैं । लगभग 90 प्रतिशत किसान जुताई के लिए बैल और देसी हल का उपयोग करते हैं । अधिकांश किसानों (72 प्रतिशत) के पास बैल की एक जोड़ी थी और और वे दूसरे किसानों को बैल किराए पर भी देते हैं । हालांकि, कुछ (18 प्रतिशत) किसानों के पास केवल एक बैल था। जिन परिवारों के पास देसी हल था, उनके पास लकड़ी का बना पाटा भी था। लगभग 14 प्रतिशत किसान 200–400 रुपये प्रतिदिन के शुल्क पर बैल के साथ देसी हल किराए पर ले रहे हैं।

किसानों द्वारा उन्नत कृषि मशीनों के उपयोग का प्रतिरूप –

स्प्रेयर, कल्टीवेटर, रोटावेटर, इलेक्ट्रिक मोटर्स, थ्रेशर आदि जैसे आधुनिक उन्नत उपकरण कुछ किसानों द्वारा उपयोग में लाये जा रहे हैं। किसानों के अनुसार, पिछले पांच वर्षों से क्षेत्र में ट्रैक्टर और पावर टिलरों का उपयोग बढ़ा है । उन्होंने फसली मौसम के दौरान मजदूर की कमी के बारे में बताया। हालांकि, 250 किसानों में से केवल 29 (11.60 प्रतिशत) किसानों के पास ट्रैक्टर अथवा पावर टिलर थे। ज्यादातर किसानों ने हल के साथ ट्रैक्टर अथवा पावर टिलर को किराये पर लिया। अधिकांश किसान ट्रैक्टर (48 प्रतिशत) को किराये पर खेत में चलाने के पक्ष में थे । इस इलाके में ट्रैक्टर के साथ हल का किराया लगभग 700 से 800 रुपये प्रति घंटा था। हालांकि, केवल 18 (7.20 प्रतिशत) और 17 (6.80 प्रतिशत) किसानों के पास कल्टीवेटर और रोटावेटर है। लगभग 22 प्रतिशत किसानों ने खेत तैयार करने के लिए रोटावेटर को किराए पर लिया। क्षेत्र में रोटावेटर का किराया लगभग 900 से 1200 रुपये प्रति घंटा है ।

नैपसैक स्प्रेयर करीब 60 प्रतिशत से अधिक किसानों के पास था। सिंचाई पंप किसानों द्वारा उपयोग किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण उपकरण है। यह लगभग 30 प्रतिशत किसानों के पास उपलब्ध है और करीब 9 प्रतिशत किसानों ने फसल के मौसम में इसे किराए पर लिया। बिजली से चलने वाले पम्प का किराया 100 से 200 रुपये प्रति घंटा था। डीजल पम्प का किराया 400 से 500 रूपये प्रति घंटा था जिसमें डीजल खर्च किराए में शामिल है। लगभग 6 प्रतिशत किसानों ने किराए पर ट्रैक्टर ट्रेलर लिया। हालांकि, सर्वेक्षण में शामिल केवल 3 प्रतिशत किसानों के पास ही ट्रेलर था। इसका किराया 400 से 500 रुपये प्रति ट्रिप है।

क्षेत्र में उन्नत कृषि यंत्रों को अपनाने में अड़चनें –

किसानों द्वारा बताई गई अड़चन में सबसे गंभीर श्रेणी में भूमि के छोटे आकार (86 प्रतिशत), कृषि यंत्रों की मरम्मत और रखरखाव की सुविधा का अभाव (85.33 प्रतिशत), पठारी क्षेत्र होने के कारण एक जगह पर पूरी जोत न हो पाना (79.33 प्रतिशत) और महंगे कृषि उपकरण एवं बैंक से ऋण मिलने में परेशानी को (78.67 प्रतिशत) किसानों ने इंगित किया। फिर आदिवासी किसानों द्वारा ''गंभीर'' अड़चन की श्रेणी में व्याप्त बाधाओं को सूचीबद्ध किया गया जिसमें नई मशीनों के बारे में जानकारी की कमी (27–33 प्रतिशत), खराब आर्थिक स्थिति (20प्रतिशत) और बिजली की कम उपलब्धता (19–33प्रतिशत) की किसानों ने ''गंभीर'' श्रेणी में रखा। इसके बाद ''कम गंभीर'' श्रेणी में बाधाओं को सूचीबद्ध किया गया जिसमें विशिष्ट मशीनों के बारे में ज्ञान की कमी और खेतों तक सड़क की अनुपलब्धता (क्रमशः 26.67 और 18 प्रतिशत) को सूचीबद्ध किया गया। औसत के आधार पर समस्याओं की रैंकिंग की गई, जहां भूमि के छोटे आकार को 4.0 में से 3.77 के स्कोर के साथ पहले स्थान पर रखा गया। एक जगह पर बड़ी खेतिहर भूमि का न हो पाना कृषि मशीनों के उपयोग को बहुत ही महंगा बना देती है। खेत तक सड़क की अनुपलब्धता को सबसे कम रैंकिंग (2.70) दी गयी एवं इसे कम गंभीर श्रेणी में रखा गया ।

कृषि मशीनीकरण की स्थिति में सुधार के लिए किसानों के सुझाव –

अधिकांश किसान कौशल विकास (95.33प्रतिशत) के लिए कार्यक्रम, कस्टम हायरिंग केंद्रों की स्थापना (95.33 प्रतिशत), कृषि मशीनीकरण मेला (90.67प्रतिशत) और कृषि मशीनों के बारे में

जागरूकता के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम (90प्रतिशत) जैसे सुझावों के अनुरूप थे। औसत के आधार पर सुझावों को अधिक से कम के क्रम में सूचीबद्ध किया गया जिसमें कौशल विकास के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम को 3.0 में से 2.95 का औसत स्कोर मिला और इसे पहले स्थान पर रखा गया। बैंक द्वारा आसानी से ऋण मिलने की सुविधा को 2,86 का न्यूनतम स्कोर दिया गया।

आदिवासी किसान देशी साधनों और उपकरणों का अब भी उपयोग कर रहे हैं क्योंकि यह सस्ता, किफायती और गाँव में आसानी से उपलब्ध हो जाता है। हालांकि, आदिवासी क्षेत्रों में कस्टम हायरिंग के माध्यम से आधुनिक उपकरणों के उपयोग का प्रचलन बढ़ रहा है। किसानों के बीच ट्रैक्टर कल्टीवेटर (48 प्रतिशत) सबसे अधिक किराए पर लिया जाने वाला उपकरण है। सर्वेक्षण में किसानों ने छोटे आकार की भूमि को कृषि मशीनीकरण अपनाने के रास्ते में सबसे बड़े बाधक के रूप में सूचीबद्ध किया है । और यह सुझाव दिया कि गॉवों में मशीनीकरण की स्थिति को सुधारने की दिशा में किसानो को प्रशिक्षण देना अत्यंत आवश्यक है।

फल व फूलों से निर्मित शर्बत एवं उनके औषधीय गुण

डा. शुभम मिश्रा एवं डा. लतिका व्यास
राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) एवं प्रसार शिक्षा निदेशालय, महाराणा प्रताप कृषि व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

प्राचीनकाल में आज की भांति न तो इतनी संख्या में चिकित्सक थे और न ही अत्याधुनिक चिकित्सा सुविधाएं, फिर भी लोग स्वस्थ रहते थे क्योंकि वे अपने आहार में नित्य पौष्टिक भोजन ग्रहण करते थे। हर भोज्य पदार्थ में कुछ न कुछ औषधीय गुण मौजूद होता है। जरूरत है कि उसे जानकर अपने आहार में शामिल किया जाए। शर्बत प्रायः वनस्पतियों व फलों के रस से बनाए जाते हैं।

गुलाब का शर्बत –

गुण एवं उपयोगिता – यह शर्बत गुलाब की ताजा एवं कोमल पंखुडियों से बने होने की वजह से अत्यन्त सुमधुर व जायकेदार होता है। यह अधिक प्यास, अंतर्दाह, ग्लानि, अवसाद, पित्त की अस्थिरता, पेशाब की जलन, आंखों की जलन व सुर्खी, खून की कमी आदि विकारों को दूर करता है।

विधि –

- पानी व शक्कर को ऑच पर रखकर उबलने दें।
- दो – तीन उबाल आने के बाद गुलाब की पत्तियां व नींबू का सत उसमें डाल दें।
- 8–10 उबाल के बाद गैस बन्द कर दें व ढक दें।
- ठण्डा होने पर छानकर रंग, खुशबू व पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड मिलाकर दोबारा छान कर बोतल में भर लें।

अनार का शर्बत –

गुण व उपयोगिता – यह अनार के रस से बनने वाला शर्बत है। यह शर्बत मन को प्रसन्न रखने वाला, प्यास को मिटाने वाला, गर्मी को शांत करने वाला, रक्तवर्धक एवं पीने में अत्यधिक लजीज पेय है।

विधि –

- सबसे पहले पानी व शक्कर को एक साफ बरतन में मिला कर ऑच पर चढ़ाएं।
- शक्कर जब पूरी तरह घुल जाए तब इसमें नींबू का सत

डाल दें।

- चार– पांच उबाल आने पर गैस बंद कर दें।
- ठण्डा होने पर उसमें अनार का रस, लाल रंग व पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड मिला दें व बोतल में भरकर रख लें।

चंदन का शर्बत –

अनार का रस	:	250 मिलीलीटर
पानी	:	250 मिलीलीटर
शक्कर	:	500 ग्राम
नींबू का सत	:	3 ग्राम
पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड	:	2 ग्राम (एक चुटकी)
लाल रंग	:	एक चुटकी
एसेन्स मिक्स फ्रूट	:	4–5 बूंद

गुण व उपयोगिता – यह शर्बत अत्यधिक जायकेदार दिल व दिमाग को ठण्डा रखने वाला है। यह पेय, क्लान्ति अवसाद, मूर्छा, गर्मी का नाशक, नाक– मुँह में खुश्की, पेशाब जलन के साथ आना, तेज बुखार का वेग, पित्त विकार, गर्मी के दिनों में होने वाले विकार, फुन्सियों आदि में उत्तम गुणकारी है।

विधि –

- सबसे पहले चंदन के बूरे व पानी को रात भर भिगो कर रखें।

चंदन का बूरा	:	100 ग्राम
पानी	:	1 लीटर
षक्कर	:	2 किलोग्राम
नींबू का सत	:	3 ग्राम
पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड	:	2 ग्राम
लाल रंग	:	एक चुटकी
एसेन्स चन्दन (खुशबू)	:	4–5 बूंद

- सवेरे उसे छानकर पानी निकाल लें। यदि यह पानी एक लीटर से कम है तो थोडा पानी और मिलाएं।
- अब इसमें चीनी डालकर उबालें। नींबू का सत डालकर चार पांच उबाल के बाद गैस बन्द कर दें।
- ठण्डा होने पर पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड, पीला रंग, एसेंस डालें व छान कर बोतल में भर लें।

नींबू का शर्बतः

गुण व उपयोगिता –इस शर्बत के सेवन से पित्त विकार, मंदाग्नि, अरूति, तृषा, उबका, पित्त, अजीर्ण, मालावरोध, रक्तदोष आदि दूर होते हैं। अग्निप्रदीपक होती है। गर्मी में सूर्य के ताप में घूमने से उत्पन्न व्याकुलता, दाह–शांत और पित्त प्रकोप, थकावट

नीबू	:	1 किलोग्राम
पानी	:	चाशनी बनाने के लिए
शक्कर	:	3 किलोग्राम
पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड	:	3 ग्राम (एक चुटकी)

दूर होती है।

सामग्री –

विधि –

- नींबू के रस की तिगुना शक्कर लें ।
- उसे बर्तन में डालकर चाश्नी बना लें।
- जब चाश्नी ठण्डी हो जाए तो उसमें नींबू का रस डालकर मिलाएँ तथा साफ बोतल में भर दें।

संतरे का शर्बतः

गुण व उपयोगिता – यह शर्बत अत्यन्त जायकेदार, मन को प्रसन्न करने वाला, थकावट दूर करने वाला, प्यास ,दाहक्लान्ति, अवसाद को मिटाने वाला, त्वचा के रंग को निखारने वाला, रक्तध ामनियों को लचीला बनाने वाला, भूख को बढाने वाला व शरीर को ठण्डक देने वाला है।

सामग्री –

विधि –

- पानी व शक्कर को ऑच पर उबलने के लिए रख दें।

- शक्कर घुलने के बाद चार पांच उबाल आने पर नींबू का सत डाल कर ठंण्डा होने दें।
- पूरी तरह ठण्डा होने पर संतरे से जूस निकाल कर इसमें मिला दें।
- फिर रंग, एसेन्स व पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड मिलाकर बोतल भर कर रख दें।

- **बेल का शर्बत –**
- **गुण व उपयोगिता** – यह शर्बत प्रवाहिका, अतिसार, विशेषतः रक्तविकार, संग्रहणी, आमदोष, खूनी बवासीर, नकसीर, पुराना कब्ज, मानसिक तनाव तथा मूर्छा को नष्ट करता है। हृदय को उतम बल प्रदान करने के साथ–साथ धातुवर्धक है।

सामग्री –

बेल का गूदा	:	200 ग्राम
पानी	:	1 लीटर
शक्कर	:	2 किलोग्राम
नींबू का सत	:	5 ग्राम
पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड	:	2 ग्राम (एक चुटकी)
नारंगी रंग	:	एक चुटकी
ब्लीना एसेन्स	:	5–6 बूंद

विधि –

- बेल के गूदे को अच्छी तरह पीसने के लिए मिक्सी में चला लें फिर सुबह अच्छी तरह मिलाकर छान लें।
- अब चीनी, पानी में डालकर उबालें व साथ ही नींबू का सत डालें।
- ठण्डा होने पर बेल का गूदा, रंग, खुशबू एवं पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइड मिलायें एवं छानकर बोतल में भर दें।

दुधारू पशुओं में गर्मी के लक्षण की पहचान एवं कृत्रिम गर्भाधान

डा0 सुधीर कुमार, डा0 उत्सव शर्मा एवं डा0 अनिल कुमार पाण्डेय
मादा पशु रोग एवं प्रसूति विभाग
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन संकाय,
शेर–ए–कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
रणबीर सिंह पुरा, जम्मू – जम्मू एवं कश्मीर

गाय एवं भैंस में कृत्रिम गर्भाधान करने के लिए पशु का गर्मी में होना अत्यंत जरूरी है । गर्मी का अभिप्राय गाय या भैंस की उस मासिक अवस्था से है जब वह गर्भित होना चाहती है। सामान्यतः वछिया वयस्क होने के उपरांत और गाय अगर गर्भित नहीं होती है तो 21 दिन (अवधि 19 से 24 दिनों तक) के बाद गर्मी में आती है और यह लगभग 12 से 24 घंटे तक इस अवस्था में रहती है। गर्मी के समय गाय या भैंस के अण्डाशय में कई प्रकार के परिवर्तन होते हैं। जिसकी वजह से पशुओं में भारी लक्षण दिखाई दिखाई देते हैं। बहुत से किसानों/पशुपालकों को पशु के ऋतु में होने के लक्षणों से संबंधित सही जानकारी नहीं होती है। गर्मी के लक्षण को पहचाने तथा गाभिन कराने के सही समय की चूक पशुपालक पर 21 दिनों के आहार एवं प्रबंधन का आर्थिक बोध नहीं डालती है बल्कि दुग्ध उत्पादन से होने वाले लाभ को भी घटा देती है। अतः पशुपालको को यह जानना चाहिए कि गाय एवं भैंस में कौन कौन से मुख्य लक्षण है एवं उनका कृत्रिम गर्भाधान का सही समय कब है। मादा प्रायः देर रात, संध्या काल या प्रातः काल गर्मी में आती है

गाय एव भैंस में गर्मी में आने के निम्नलिखित लक्षण मिलते हैं

1. बार – बार जोर–जोर रंभाना
2. योनि में लालिमा होना एवं योनि में विशेष चिकनाहट, फूल–फुलाव एवं लसलसापन आना
3. योनि से तैलीय प्रवृति के चिपचिपे पदार्थ का स्त्राव (योनि द्रव)
4. प्रायः पूंछ एवं पुट्ठे पर योनि स्त्राव लगा होना
5. ऋतुमई मादा का अन्य पशुओं को चाटना
6. मादा एवं नर पशु का एक–दूसरे की तरफ आकर्षित होना
7. अपने ऊपर अन्य साथी मादा/सांड़ को सवार होने देना (इस स्थिति को ऋतुमति कहते है) या अन्य साथी पर सवार होना
8. घास चरते समय या घूमते समय पूंछ को ज्यादा समय तक बार–बार ऊपर उठाये रखना
9. बार–बार पेशाब करना
10. कम चारा दाना खाना
11. दूध उत्पादन में कमी होना

गाय, भैंस में गर्मी के लक्षण एक जैसे नहीं होते हैं। किसी में मध्यम होते है तो किसी में ज्यादा तीव्र, तो किसी में एकदम कम।

नर प्रजनन कोषिका (शुक्राणु) को कृत्रिम तरीके से मादा पशु के जननांगों में प्रत्यारोपित करना कृत्रिम गर्भाधान कहलाता है। इस तकनीक में वीर्य का कृत्रिम योनि अथवा अन्य तकनीक से संकलन करके प्रयोग में लाने के समय तक उचित ढंग से सुरक्षित रखकर उसकी गुणवत्ता का परीक्षण के उपरान्त, वैसा ही या तनुकृत करके, ऋतुमयी मादा के गर्भाशय ग्रीवा एवं गर्भाशय में कृत्रिम तरीके से प्रत्यारोपित किया जाता है। पशुपालन के क्षेत्र में कृत्रिम गर्भाधान

एक बहुत ही बड़ा अनुसंधान है जिसके फलस्वरूप अच्छे एवं चयनित सांडो के वीर्य से मादाओं से बच्चे लेकर शीघ्र पशुओं का विकास संभव है। कृत्रिम गर्भाधान विधि अपनाने के निम्नलिखित दो उद्देश्य है :

1. शीघ्रता से पशु नस्ल सुधार करना।
2. पशुओं का दुग्ध उत्पादन बढ़ाना।

कृत्रिम गर्भाधान से लाभ –

1. कृत्रिम गर्भाधान का सबसे बड़ा लाभ उच्च कोटि के सांड़ों द्वारा अधिकतम संख्या में उत्तम सन्तति प्राप्त करना है। प्राकृतिक समागम से एक सांड़ से एक वर्ष में अधिकतम 100 वत्स प्राप्त किये जात सकते हैं जबकि उतने ही समय में कृत्रिम गर्भाधान विधि से 2000 वत्स तक प्राप्त किये जा सकते हैं।

2. अच्छे सांड जो कि शारीरिक व्याधियों या चोटों से पीड़ित होते हैं। इस विधि द्वारा प्रजनन हेतु उपयोग में लाया जा सकता है।

3. एक जाति के सांड का अन्य जाति के मादा से संभोग करवाकर नई–नई जातियॉ उत्पन्न करके उत्पादन में वृद्धि लाई जा सकती है।

4. कृत्रिम गर्भाधान के द्वारा सांड़ो में होने वाले संक्रामक जननेंद्रिय रोगों के फैलाव को भी रोका जा सकता है।

5. गरीब किसान/पशुपालक जो उच्च कोटि का सांड नहीं खरीद सकता, वह इस तकनीक से उच्च कोटि के हिमकृत वीर्य का क्रय एवं कृत्रिम गर्भाधान के लिए उपयोग कर लाभान्वित हो सकता है।

6. अच्छी नस्ल के सांड जो किसी कारण से अपंग या लंगड़े हो जाते हैं और किसी गाय या भैंस के ऊपर चढ़ नहीं पाते, इस विधि द्वारा प्रजनित करवाये जा सकते हैं।

7. अच्छी नस्ल के सांड़ों का वीर्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजकर प्रजनन कार्य में लाया जा सकता है। यह काफी सस्ता पड़ता है।

कृत्रिम गर्भाधान से हानियॉ –

1. मादा पशु के मदकाल की पहचान के लिए ज्ञान, परिश्रम एवं समय की आवश्यकता होती है।

2. कृत्रिम गर्भाधान में अधिक प्रबंधन क्षमता का उपयोग होता है।

3. इस विधि में कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है।

4. कृत्रिम गर्भाधान में आने वाला यंत्र एवं सामान बहुत मूल्यवान होता है। जिसे लगातार सफाई रखने की आवश्यकता होती है।

सफल कृत्रिम गर्भाधान हेतु प्रत्येक पशुपालक के लिए यह जरूरी है कि वह पशु के ऋतु/गर्म होने के समय पशु द्वारा प्रदर्शित लक्षणों की जानकारी रखें जिससे वह अपने पशुओं को सही समय पर कृत्रिम गर्भाधान करा सके। गर्मी समाप्त होने के लगभग 10–12 घंटे के बाद अंडाशय से डिम्ब निकालता है जो कि शुक्राणु से मिलकर भ्रूण बनाता है। साधारणतया गायों अथवा भैंसों में कृत्रिम गर्भाधान गर्मी समाप्त होने 8 घंटे पूर्व से लेकर गर्मी समाप्त होने तक करवा लेना चाहिए। ऐसा करने से पशुओं में गर्भधारण करने की क्षमता अधिक हो जाती है क्योंकि अंडक्षरण की प्रक्रिया मदकाल पूरा होने 10–12 घंटे के उपरांत होती है एवं यह समय शुक्राणु तथा अंडे के मिलन का सटीक समय होता है। मोटे तौर पर यदि पशु सुबह के समय गर्मी में आया हो तो कृत्रिम गर्भाधान शाम के समय एवं यदि शाम के समय गर्मी में आया हो तो अगले दिन सुबह में करवा लेना चाहिए। कृत्रिम गर्भाधान के बाद अगर गाय या भैंस फिर 21– 22 दिन के बाद गर्मी में आ जाये तो पुनः गर्भाधान करवाना चाहिए क्योंकि कुछ पशु एक बार में ही गर्भित हो जातें हैं जबकि कुछ पशु 2–3 बार में गर्भधारण करते हैं।

कृत्रिम गर्भाधान करवाते समय पशु को हिमकृत वीर्य (सीमेन स्ट्रोज) को लिक्विड नाईट्रोजन कंटेनर से निकाल कर तुरंत लगाया जाना चाहिए। अन्यथा पशु के गर्भित होने की संभावना कम हो जाती है। कभी–कभी पशुओं के अण्डाशय में कमी अथवा हार्मोन्स की कमी के कारण भी गर्भ नहीं ठहर पाता है। ऐसे कारणों का संदेह होने पर निकट के पशु चिकित्सक की सलाह लेकर जॉच व उचित उपचार करवा लेना चाहिए।

मादा पशु में कृत्रिम गर्भाधान –

यदि पशुपालक प्रजनन की इस वैज्ञानिक विधि, कृत्रिम गर्भाधान की उपयोगिता को समझने लगेंगे तो पशुओं में शीघ्रता से नस्ल सुधार होगा, पशुओं का दुग्ध उत्पादन बढ़ेगा और उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी होगी।

स्वतंत्र किसान - सशक्त किसान
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
भारत सरकार
21वीं सदी में भारत का किसान बंधनों में नहीं, खुलकर खेती करेगा।
21वीं सदी का किसान जहां मन किया वहां फसल बेचेगा और जहां ज्यादा पैसा मिले वहां पर फसल बेचेगा।
कृषि सुधारों की अहम कड़ी
एक लाख करोड़ रुपये का
कृषि इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड
अब किसान भाई-बहन इस फंड की मदद से उत्पादन और मार्केटिंग से जुड़ी बेहतर सुविधाओं का लाभ उठा सकते हैं
2 करोड़ रुपये तक के ऋण पर सरकार दे रही है गारंटी
सभी सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के अलावा 5 निजी क्षेत्र के बैंकों से ऋण सुविधा
2 करोड़ रुपये तक के ऋण पर, ब्याज में 3% की छूट अधिकतम 7 वर्ष के लिए
ऋण पुनर्भुगतान के लिए मोरेटोरियम 6 महीने से 2 वर्ष तक
आगामी समय में कृषि इन्फ्रास्ट्रक्चर का निर्माण
1 गोदामों और साइलोस का निर्माण
2 छंटाई-ग्रेडिंग इकाइयां, पैक हाऊसों का निर्माण
3 सप्लाई चेन और कोल्ड चेन सुविधाओं का सृजन
4 प्राथमिक कृषि प्रसंस्करण केंद्रों की स्थापना
5 'बीज से बाजार' तक के विजन को मजबूती
कौन ले सकता है लाभ ?
सभी किसान भाई-बहन
कृषि उद्यमी
किसान उत्पादक संघ
प्राथमिक कृषि सहकारी समितियां
स्वयं-सहायता समूह
छोटे और सीमांत किसानों को विशेष लाभ
छोटे और सीमांत किसानों की को-ऑपरेटिव सोसायटियों, किसान उत्पादक संघों या स्वयं-सहायता समूहों के लिये वित्त-पोषण की सुविधा।
10,000 किसान उत्पादक संघ स्थापित हो रहे हैं।
अब तक 1,566 करोड़ रुपये की फंडिंग स्वीकृत।
योजना का लाभ लेने के लिये जिला कलेक्टर या क्षेत्रीय प्रबंधक, नाबार्ड से सम्पर्क करें या वेबसाइट www.agriinfra.dac.gov.in पर आवेदन करें।
किसान कॉल सेंटर 1800-180-1551
AgriGoI
AgriGoI

Regd.No.14249/57/RNI

इन हाउस प्रोडक्शन, प्रकाशन एकक, विस्तार निदेशालय, कृषि विस्तार सदन, पूसा, नई दिल्ली–110012